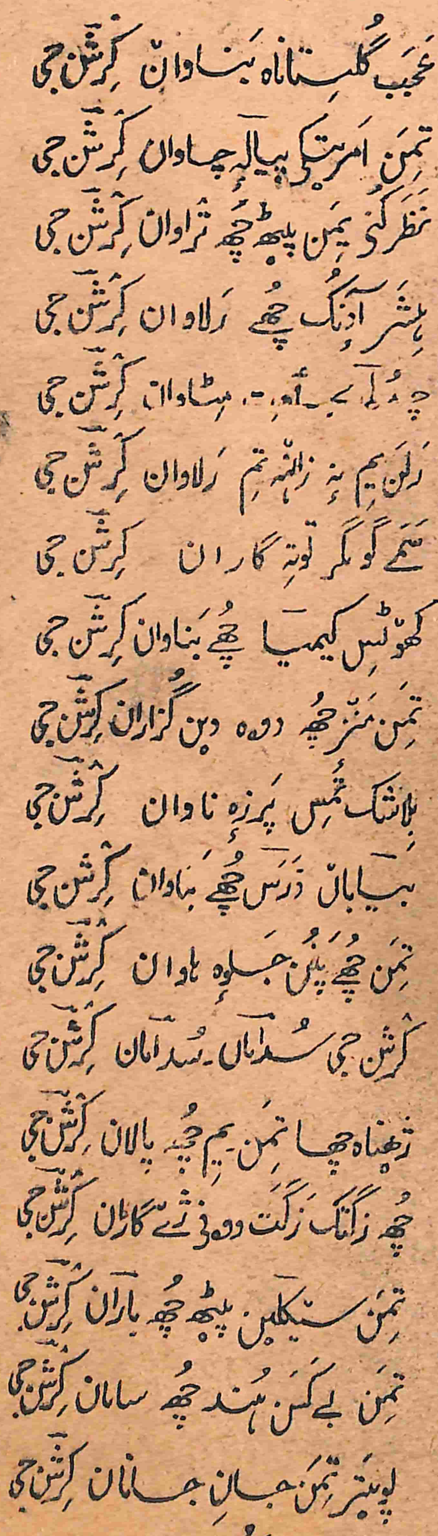
از فاضل کاشمیری



بالک اوستھا

گلن ہند سمت پھانچھلاوان کرشن جی
یمن آسہ پریچ تہ پنیچ راں چھہ
کرستانی - پارسی تہ ہندی سکھ مسلمان
دو دس یشیکریس منز اشارہ تفاوت
دُنیٔ ہنز نفرت تہ ... آتش
دلس منز تھز چھس تہ مُرلی اتھ چھس
یہ متھرا یہ جمنا - یہ گنگا یہ رادھا
سیاہ ہرد والیو تمس تش سوز رلیب
بران لول گوپی تمس شوزہ شانے
یمس آسہ دس زانجیر لولہ نارن ا
لیچھس حب وچھس منز چھ تس شولہ ناوان
یمو پوئنبرنی گت کمس سریہ پانس
منز راستی نظرہ پوز آنہ ناوان
تسند سریہ بیش - وڈونن وحشین نام
حسد خون خوار خشمہ ہوت - نار ژاپان
یمن تاپہ کرالو چھ میٹر شورہ کرمٹر
یمن کانہہ نہ آسان - یمن دل پریشان
چھلت زھن یمو کام - کردد - یوہ انکار

عجب گلستانہ بناوان کرشن جی
تمن امرتکی پیالہ چاوان کرشن جی
نظر کنی یمن پیٹھ چھ ژراوان کرشن جی
ہشر آدنک چھے رلاوان کرشن جی
چ ... ہٹاوان کرشن جی
رلن یم نہ زانہہ تم رلاوان کرشن جی
ہمے گو مگر تو تہ گاران کرشن جی
کھوٹس کیمیا چھے بناوان کرشن جی
تمن منز چھ دوہ دین گزاران کرشن جی
بلاشک تمس پرزہ ناوان کرشن جی
بیابان ذرس چھے بہاوان کرشن جی
تمن چھے پنن جلوہ ہاوان کرشن جی
کرشن جی سدامان - سدا مان کرشن جی
زھناہ چھا تمن یم چھ پالان کرشن جی
چھ زنگنک زنگت دوہ نیٔ تیٔ گاران کرشن جی
تمن سنگلین پیٹھ چھ یاران کرشن جی
تمن بےکسن ہند چھ سامان کرشن جی
لو بیتر تمن جان جانان کرشن جی

یہ تھنی ہیوہ مجسم چھ حسنک جمالک
چھ فاضل دلس منز بساوان کرشن جی

ॐ श्रीगणेशाय नमः । श्रीगुरुभ्यो नमः । श्रीकाशीविश्वेश्वराभ्यां नमः । श्रीशंकराचार्येभ्यो नमः । अथ तृतीयाऽध्यायप्रारंभः । तहां इस भगवद्गीताके प्रथम अध्यायकरिकै उपोद्घात करा जो संपूर्ण गीताशास्त्रका अर्थ है । सो संपूर्ण गीताशास्त्रका अर्थ सूत्ररूप द्वितीय अध्यायकरिकै सूचन करा है। सो प्रकार दिखावै हैं । या अधिकारी पुरुषकूं प्रथम निष्काम कर्मनिष्ठा होवै है । तिसतैं अनंतर अंतःकरणकी शुद्धि होवै है । तिसतैं अनंतर शमदमादिक साधनपूर्वक सर्व कर्मोंका संन्यास होवै है । तिसतैं अनंतर वेदांतवाक्योंके विचारसहित भगवद्भक्तिनिष्ठा होवै है । तिसतैं अनंतर तत्त्वज्ञाननिष्ठा होवै है । तिसतैं अनंतर तिस तत्त्वज्ञाननिष्ठाका त्रिगुणात्मक अविद्याकी निवृत्तिपूर्वक जीवन्मुक्तिरूप फल होवै है । सो जीवन्मुक्तिरूप फल प्रारब्धकर्मके फलभोगपर्यंत रहे है । ता प्रारब्धकर्मके समाप्त हुएतैं अनंतर विदेहमुक्ति होवै है । तहां जीवन्मुक्तिदशाविषे परम पुरुषार्थके आलंबन करिकै इस पुरुषकूं पर वैराग्यकी प्राप्ति होवै है । ता परवैराग्यकी प्राप्तिविषे दैवीसंपदनामा शुभ वासना उपयोगी होवै है। यातैं सा शुभवासना तौ ग्रहण करणे योग्य है । और आसुरी संपदनामा अशुभ वासना ता परवैराग्यकी प्राप्तिविषे विरोधी है । यातैं सा अशुभ वासना परित्याग करणे योग्य है । तहां दैवी संपदाका असाधारण कारण सात्विकी श्रद्धा है । और आसुरी संपदाका असाधारण कारण राजसी तथा तामसी श्रद्धा है । इस प्रकार ग्रहण करणेके योग्य तथा परित्याग करणेके योग्य पदार्थोंका विभाग करिकै सर्व गीताशास्त्रके अर्थकी परिसमाप्ति होवै है । सो सर्व अर्थ इस गीताके सूत्ररूप द्वितीय अध्यायविषे सूचन करा है । तहां इस गीताके द्वितीय अध्यायविषे (योगस्थः कुरु कर्माणि) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो अंतःकरणके शुद्धिका साधनरूप निष्काम कर्मनिष्ठा है। सा निष्काम कर्मनिष्ठा सामान्यरूपकरिकै तथा विशेषरूपकरिकै इस गीताके तृतीय और चतुर्थ या दोनों अध्यायोंविषे निरूपण करी है । तिसतैं अनंतर (विहाय कामान्यः सर्वान्) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो शुद्ध अंतःकरणवाले अधिकारी पुरुषकूं शमदमादिक साधनसंपत्तिपूर्वक सर्व कर्मोंके संन्यासकी निष्ठा है । सा सर्व कर्मसंन्यासनिष्ठा इस गीताके पंचम और षष्ठ या दोनों अध्यायोंविषे निरूपण करी है । इतनै करिकै त्वंपदार्थका निरूपण सिद्ध भया । तिसतैं अनंतर (युक्त आसीत मत्परः) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो वेदांतवाक्योंके विचार सहित अनेक प्रकारकी भगवद्भक्तिनिष्ठा है। सा भगवद्भक्तिनिष्ठा इस गीताके सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, और द्वादश या षट् अध्यायोंविषे निरूपण करी है। इतनै करिकै तत्पदार्थका निरूपण सिद्ध भया । तहां पूर्व पूर्व अध्यायका उत्तर उत्तर अध्यायके साथि संबंधरूप जो अवांतर संगति है तथा अवांतर प्रयोजनोंका भेद है ते दोनों तिस तिस अध्यायके व्याख्यानविषे हम निरूपण करैंगे ।

तिसतैं अनंतर (वेदा विनाशिनं नित्यं) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो तत्त्वंपदार्थका अभेद ज्ञानरूप तत्त्वज्ञाननिष्ठा है । सा तत्त्वज्ञाननिष्ठा इस गीताके त्रयोदशे अध्यायविषे प्रकृतिपुरुषके विवेकद्वारा निरूपण करी है । तिसतैं अनंतर (त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करा जो त्रैगुण्यनिवृत्तिरूप ता ज्ञाननिष्ठाका फल है। सो फल इस गीताके चतुर्दशे अध्यायविषे निरूपण करा है । सो त्रैगुण्यकी निवृत्तिही जीवन्मुक्ति है। यह वार्त्ता गुणातीत पुरुषके लक्षणोंके कथनकरिकै निरूपण करी है । तिसतैं अनंतर (तदा गंतासि निर्वेदं) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो परवैराग्यनिष्ठा है । सा परवैराग्यनिष्ठा इस गीताके पंचदशे अध्यायविषे संसाररूप वृक्षके उच्छेदनद्वारा निरूपण करी है । तिसतैं अनंतर (दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः) इत्यादिक वचनोंविषे स्थितप्रज्ञ पुरुषके लक्षणकरिकै सूचन करी जो तिस परवैराग्यकी उपयोगी दैवी संपदा है सा दैवी संपदा तौ ग्रहण करणे योग्य है । और (यामिमां पुष्पितां वाचं) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो ता परवैराग्यकी विरोधी आसुरी संपदा है सा आसुरी संपदा परित्याग करणे योग्य है । यह सर्व वार्त्ता इस गीताके षोडशे अध्यायविषे कथन करी है । तिसतैं अनंतर (निर्द्वंद्वो नित्यसत्वस्थः) इत्यादिक वचनोंकरिकै सूचन करी जो ता दैवी संपदाका असाधारणकारणरूप सात्विकी श्रद्धा है । सा सात्विकी श्रद्धा इस गीताके सप्तदशे अध्यायविषे राजसी तामसी श्रद्धाकी निवृत्तिपूर्वक कथन करी है । इस प्रकार त्रयोदशे अध्यायतैं आदि लैके सप्तदशे अध्यायपर्यंत पंच अध्यायोंविषे फलसहित ज्ञाननिष्ठा निरूपण करी है । तिसतैं अनंतर इस गीताके अष्टादशे अध्यायविषे पूर्व कथन करे हुए सर्व अर्थका उपसंहार करा है। इस प्रकारसैं सर्व गीताके अर्थका परस्पर संबंध सिद्ध होवै है इति । तहां पूर्व द्वितीय अध्यायविषे सांख्यबुद्धिकूं आश्रयण करिकै श्रीभगवान्नैं (एषातेऽभिहिता सांख्ये) इत्यादिक वचनोंकरिकै ज्ञाननिष्ठा कथन करी थी । तथा योगबुद्धिकूं आश्रयण करिकै श्रीभगवान्नैं (योगे त्विमां शृणु) इसतैं आदि लैके (कर्मण्येवाधिकारस्ते मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि) इस वचनपर्यंत सर्व वचनोंकरिकै कर्मनिष्ठा कथन करी थी । परंतु ज्ञाननिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा या दोनों निष्ठावोंके अधिकारीका भेद श्रीभगवान्नैं स्पष्ट करिकै कथन करा नहीं । शंका । तिन दोनों निष्ठावोंका एकही अधिकारी है । काहेतैं ज्ञान और कर्म या दोनोंका समुच्चयही मोक्षके प्राप्तिका हेतु है । समाधान । ज्ञान और कर्म या दोनोंका समुच्चय अंगीकार करिकै तिन दोनोंकी एक अधिकारीता श्रीभगवान्कूं वांछित है नहीं । काहेतैं (दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय) इस वचनकरिकै श्रीभगवान्नैं ज्ञाननिष्ठाकी अपेक्षा करिकै कर्मनिष्ठाविषे निकृष्टता कथन करी है। और (यावानर्थ उदपाने) या वचनकरिकै श्रीभगवान्नैं आत्मज्ञान-

के फलविषे सर्व कर्मोंके फलका अंतरभाव दिखाया है । और स्थितप्रज्ञ पुरुषका लक्षण कहिकरिकै श्रीभगवान्नैं (एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ) या वचनकरिकै प्रशंसासहित ज्ञानके फलका उपसंहार करा है । और (या निशा सर्वभूतानां) इत्यादिक वचनोंकरिकै श्रीभगवान्नैं ज्ञानवान् पुरुषकूं द्वैतदर्शनके अभावतैं कर्मोंके अनुष्ठानका असंभव कथन करा है । और जैसे लोकविषे अंधकारकी निवृत्तिविषे केवल प्रकाशमात्रकूंही कारणता होवै है । तैसे अविद्याकी निवृत्तिरूप मोक्षफलविषेभी केवल ज्ञानमात्रकूंही कारणता है । और श्रुतिभी ज्ञानमात्रतैंही मोक्षकी प्राप्तिका कथन करे है । तहां श्रुति । " तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यःपंथा विद्यतेऽयनाय " । अर्थ यह । यह अधिकारी पुरुष आनंदस्वरूप आत्माकूं साक्षात्कारकरिकै संसाररूप मृत्युकूं नाश करै है । और मोक्षकी प्राप्तिवासतै आत्मसाक्षात्कारतैं विना दूसरा कोई मार्ग है नहीं इति । यातैं ज्ञान और कर्म या दोनोंका समुच्चय संभवै नहीं । तथा एक अधिकारिकताभी संभवै नहीं । शंका । जैसे प्रकाश तथा अंधकार यह दोनों परस्पर विरोधी हैं । यातैं तिन दोनोंका समुच्चय संभवै नहीं । तैसे आत्मज्ञान तथा कर्म यह दोनोंभी परस्पर विरोधी हैं । यातैं तिन दोनोंकाभी समुच्चय संभवै नहीं । यातैं ज्ञान तथा कर्म इन दोनोंका भिन्न भिन्नही अधिकारी होवै है । समाधान । ज्ञान तथा कर्म इन दोनोंका भिन्न भिन्नही अधिकारी होवै है यह वार्त्ता यद्यपि सत्य है । तथापि एकही अर्जुनके प्रति ज्ञान और कर्म इन दोनोंका उपदेश करणा संभवता नहीं । काहेतैं जो देहाभिमानी पुरुष कर्मका अधिकारी होवै है । तिस पुरुषके प्रति ज्ञाननिष्ठाका उपदेश करणा योग्य नहीं होवै है । और जो देहाभिमानतैं रहित पुरुष ज्ञानका अधिकारी होवै है । तिस पुरुषके प्रति कर्मनिष्ठाका उपदेश करणा योग्य नहीं होवै है । शंका । एकही पुरुषके प्रति विकल्पकरिकै ज्ञान तथा कर्म या दोनोंका उपदेश संभव होइ सकै है । समाधान । समान स्वभाववाले पदार्थोंकाही विकल्पकरिकै विधान होवै है । जैसे होमविषे समान स्वभाववाले ब्रीहियवादिक पदार्थोंका विकल्पकरिकै विधान होवै है । परंतु उत्कृष्ट निकृष्ट पदार्थोंका विकल्पकरिकै विधान होवै नहीं । और आत्मज्ञानकी अपेक्षाकरिकै कर्मोंविषे निकृष्टता तथा कर्मोंकी अपेक्षाकरिकै आत्मज्ञानविषे उत्कृष्टता (दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय) इत्यादिक वचनोंकरिकै स्पष्टही है । यातैं ज्ञान तथा कर्म या दोनोंका विकल्प संभवै नहीं । किंवा । कार्यसहित अविद्याकी निवृत्तिकरिकै उपलक्षित जो ब्रह्मानंदरूप मोक्ष है । ता मोक्षविषे कर्मोंके स्वर्गादिक फलकी न्यांई न्यून अधिकता संभवै नहीं । या कारणतैंभी ज्ञान और कर्म या दोनोंका समुच्चय संभवै नहीं । यातैं यह अर्थ सिद्ध भया । ज्ञाननिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा या दोनों निष्ठावोंका जो कदाचित् भिन्न भिन्न अधिकारी मानियें । तौ एक पुरुषके

प्रति तिन दोनों निष्ठावोंका उपदेश संभवै नहीं । और तिन दोनों निष्ठावोंका जो कदाचित् एकही अधिकारी मानियें । तौ परस्पर विरुद्ध तिन दोनों निष्ठावोंका समुच्चय नहीं संभवैगा । तथा कर्मकी अपेक्षाकरिकै ता आत्मज्ञानविषे श्रेष्ठताभी नहीं सिद्ध होवैगी । और ज्ञान तथा कर्म या दोनोंका जो कदाचित् विकल्प अंगीकार करियें । तौ सर्वतैं उत्कृष्ट तथा परिश्रमतैं विनाही सिद्ध होणेहारा जो आत्मज्ञान है । ता आत्मज्ञानका परित्याग करिकै बहुत परिश्रमकरिकै सिद्ध होणेहारा तथा अत्यंत निकृष्ट ऐसे कर्मका अनुष्ठान कोईभी पुरुष करैगा नहीं । इस प्रकारका विचारकरिकै अत्यंत व्याकुल हुई है बुद्धि जिसकी ऐसा सो अर्जुन श्रीभगवान्के प्रति या प्रकारका वचन कहता भया ।

(मू. श्लो.) अर्जुन उवाच ॥ ज्यायसीचेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन । तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव ॥ १ ॥
(पदच्छेदः) ज्यायसी । चेत् । कर्मणः । ते । मताँ । बुद्धिः । जनार्दन । तत् । किं । कर्मणि । घोरे । मां । नियोजयसि । केशव ॥ १ ॥ (पदार्थः) हे जनार्दन तुमारेकूं जबी निष्कामकर्मतैं आत्मविषयक बुद्धि श्रेष्ठरूपकरिकै अभिमत है तबी हे केशव हिंसारूप घोर कर्मविषे तूं हमारेकूं किसवासतै प्रेरणा करता है ॥ १ ॥

टीका । हे जनार्दन जो कदाचित् तुमारेकूं निष्काम कर्मोंतैं आत्मतत्त्वविषयक बुद्धि अत्यंत श्रेष्ठरूपताकरिकै अभिमत है । तौ हे केशव हिंसादिक अनेक आयासोंकरिकै युक्त इस युद्धरूप घोर कर्मविषे मैं अत्यंत भक्तकूं (कर्मण्येवाधिकारस्ते) इत्यादिक वचनोंकरिकै आप वारंवार किस वासतै प्रेरणा करते हो । तहां सर्वैर्जनैरर्द्यते याच्यते स्वाभिलषितसिद्धये इति जनार्दनः । अर्थ यह । अपणे मनवांछित पदार्थोंकी प्राप्तिवासतै सर्व जनोंनैं जिसके प्रति याचना करीती है ताका नाम जनार्दन है । अथवा जनं जननं तत्कारणमज्ञानं च स्वसाक्षात्कारेणार्दयति हिनस्तीति जनार्दनः । अर्थ यह । जन्मकूं तथा जन्मके कारण अज्ञानकूं जो अपणे साक्षात्कारकरिकै नाश करै है ताका नाम जनार्दन है । इहां (हे जनार्दन) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । ऐसे याचना करणेहारे भक्तजनोंके प्रति आप मनवांछित पदार्थोंकी प्राप्ति करणेहारे हो । यातैं अपणे श्रेयके निश्चय करणेवासतै जो हमारी आपके प्रति याचना है सो कोई अनुचित नहीं है इति । और (हे केशव) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । सर्वका ईश्वर तथा सर्व इष्ट पदार्थोंकी प्राप्ति करणेहारे जो आप भगवान् हो । तिस एक आपकेही (शिष्यस्तेहं शाधि मां) इत्यादिक प्रार्थनापूर्वक शरणकूं प्राप्त भया जो मैं भक्त अर्जुन हूं । तिस हमारेसाथि वंचना करणी आपकूं उचित नहीं है इति ॥ १ ॥ ❀ ॥ शंका । हे अर्जुन

मैं कृष्णभगवान् किसीभी प्राणीके साथि वंचना करता नहीं । तौ तैं अत्यंत प्रिय भक्तके साथि मैं किस प्रकार वंचना करौंगा । किंतु नहीं करौंगा । और तूं अर्जुन हमारेविषे ता वंचना करणेका कौन चिन्ह देखता है । ऐसी भगवान्की शंकाके हुए अर्जुन श्रीभगवान्के प्रति कहे है ।

(मू. श्लो.) व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे । तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोहमाप्नुयां ॥ २ ॥ (पदच्छेदः) व्यामिश्रेण । इव । वाक्येन । बुद्धिं । मोहयसि । इव । मे । तत् । एकं । वद । निश्चित्य । येन । श्रेयः । अहं । आप्नुयां ॥ २ ॥ (पदार्थः) हे भगवन् मिल्ये हुए वचनकी न्यांई वचनकरिकै आप हमारे बुद्धिकूं मोहकर्त्ताकी न्याई मोहकी प्राप्ति करते हो तिस एक अधिकारकूं आप निश्चयकरिकै कथन करो जिसकरिकै मैं अर्जुन मोक्षकूं प्राप्त होवौं ॥ २ ॥

टीका । हे भगवन् (त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन) इत्यादिक वचनोंकरिकै आप पूर्व किसी स्थलविषे तौ वेदनिष्ठाका परित्याग करावते भये हो । और (कर्मण्येवाधिकारस्ते) इत्यादिक वचनोंकरिकै पूर्व किसी स्थलविषे तौ आप तिसी वेदनिष्ठाका ग्रहण करावते भये हो और (निर्द्वंदो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्) इत्यादिक वचनोंकरिकै पूर्व किसी स्थलविषे तौ आप निवृत्तिमार्गका उपदेश करते भये हो । और (धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते) इत्यादिक वचनोंकरिकै पूर्व किसी स्थलविषे तौ आप प्रवृत्तिमार्गका उपदेश करते भये हो । इस प्रकार ज्ञाननिष्ठाकूं तथा कर्मनिष्ठाकूं प्रतिपादन करणेहारे जो आपके वचन हैं । ते आपके वचन यद्यपि मिल्ये हुए अर्थकूं कथन करते नहीं । किंतु भिन्न भिन्न अर्थकूं कथन करते हैं । तथापि मैं अर्जुनकूं अपणे बुद्धिके दोषतैं ज्ञाननिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा या दोनोंका एकही अधिकारी है अथवा भिन्न भिन्न अधिकारी हैं या प्रकारके संशयकरिकै मिल्ये हुए अर्थके वाचक प्रतीत होवै हैं । यह अर्थ अर्जुननैं (व्यामिश्रेणेव) या वचनविषे स्थित इव या शब्दकरिकै सूचन करा इति । हे भगवन् ऐसे ज्ञान तथा कर्मनिष्ठाके प्रतिपादक व्यामिश्रित वाक्योंकरिकै आप मैं मंदबुद्धि अर्जुनके अंतःकरणकूं मानो मोहकी प्राप्ति करते हो । इहां (मोहयसीव) या वचनविषे स्थित जो इव यह शब्द है । ता इवशब्दकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । आप परम कृपालु हो । यातैं आप हमारे मोहके निवृत्त करणेवासतैही प्रवृत्त हुए हो । कोई हमारेकूं मोह करणेवासतै आप प्रवृत्त हुए नहीं । तथापि आपके वचनोंकूं श्रवण करिकै हमारेकूं जो भ्रमरूप मोह भया है । सो अपणे अंतःकरणके दोषतैं भया है इति । हे भगवन् ज्ञान तथा कर्म या दो-

॥ ३ ॥ नोंका जो कदाचित् एकही पुरुष अधिकारी होवै । तौ परस्पर विरुद्ध होणेतैं ता ज्ञान तथा कर्म दोनोंका समुच्चय नहीं संभवैगा । और ज्ञान तथा कर्म यह दोनों एक अर्थके हेतु हैं नहीं । यातैं तिन दोनोंका विकल्पभी संभवै नहीं । और पूर्व उक्त रीतिसैं जो कदाचित् आप ज्ञान तथा कर्म या दोनोंके अधिकारीका भेद मानते होवौ । तौ एकही मैं अर्जुनके प्रति परस्पर विरुद्ध ज्ञाननिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा या दोनोंका उपदेश संभवता नहीं । और जैसे एकही पुरुष एकही कालविषे परस्पर विरुद्ध स्थिति तथा गमन या दोनोंके करणेविषे समर्थ होवै नहीं । तैसे एकही मैं अर्जुन एकही काल-विषे परस्पर विरुद्ध ज्ञाननिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा या दोनोंके अनुष्ठान करणेविषे समर्थ नहीं हूं । यातैं ज्ञानका अधिकार तथा कर्मका अधिकार या दो-नोंविषे एक अधिकारकूं आप निश्चयकरिकै हमारेप्रति कथन करो । जिस अधिकार निश्चयपूर्वक आपके वचनकरिकै मैं अर्जुन ज्ञान तथा कर्म या दोनोंके मध्यविषे एक ज्ञानका अथवा कर्मका अनुष्ठान करिकै मोक्षरूप श्रेयकूं प्राप्त होवौं । इहां ज्ञाननिष्ठा और कर्मनिष्ठा या दोनों नि-ष्ठावोंका जो एक अधिकारी अंगीकार करियें तौ तिन दोनों निष्ठावोंका विकल्प तथा समुच्चय संभवै नहीं । यातैं तिन दोनों निष्ठावोंके अधिकारीके भेद जाणणेवासतै यह दो श्लोकोंकरिकै अर्जुनका प्रश्न है यह सिद्ध भया इति ॥ २ ॥ ❀ ॥ इस प्रकार जबी अर्जुननैं ज्ञाननिष्ठा तथा कर्म-निष्ठा या दोनों निष्ठावोंके अधिकारीके भेदका प्रश्न करा । तबी सो श्रीभगवान् ता अर्जुनके प्रश्नके अनुसारी उत्तरकूं कहता भया ।

(मू. श्लो.) श्रीभगवानुवाच । लोकेस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ । ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनां ॥ ३ ॥ (पदच्छेदः) लोके । अस्मिन् । द्विविधा । निष्ठा । पुरा । प्रोक्ता । मया । अनघ । ज्ञानयोगेन । सांख्यानां । कर्मयोगेन । योगिनां ॥३॥ (पदार्थः) हे पापतैं रहित अर्जुन इस लोकविषे पूर्व अध्यायविषे हमनैं दो प्रकारकी निष्ठा कथन करी थी तहां तत्ववेत्ता पुरुषोंकूं ज्ञानरूप योगकरिकै सा निष्ठा कही थी और कर्मयोगवान् पुरुषोंकूं कर्मरूप योगकरिकै सा निष्ठा कथन करी थी ॥३॥

टीका । हे अर्जुन अधिकारीरूपकरिकै अंगीकार करे जो शुद्धअंतःकरणवाले तथा अशुद्धअंतःकरणवाले दो प्रकारके जन हैं । ता दो प्रकारके ज- ॥ ३ ॥
नरूप इस लोकविषे ज्ञानपरतारूप तथा कर्मपरतारूप दो प्रकारकी स्थितिरूप निष्ठा पूर्व अध्यायविषे मैं कृष्णभगवान्नैं तुमारेप्रति स्पष्टरूपकरिकै क-
थन करी थी । यातैं ज्ञाननिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा या दोनों निष्ठावोंविषे एक अधिकारीकी शंकाकरिकै तूं ग्लानिकूं मत प्राप्त होउ । इहां (हे अनघ)

क्या हे पापोंतैं रहित या संबोधनकरिकै श्रीभगवान्‌नैं ता अर्जुनविषे ब्रह्मविद्याके उपदेशकी योग्यता सूचन करी । काहेतैं (ज्ञानमुत्पद्यते पुंसां क्षयात्पापस्य कर्मणः) इत्यादिक शास्त्रोंके वचनोंनैं पापकर्मतैं रहित पुरुषोंविषेही आत्मज्ञानके उत्पत्तिकी योग्यता कथन करी है इति । और सा एकही स्थितिरूप निष्ठा साध्य अवस्था तथा साधन अवस्था या दोनों अवस्थावोंके भेदकरिकै दो प्रकारकी होवै है । कोई दोनोंही निष्ठा स्वतंत्र हैं नहीं । या अर्थके बोधन करणेवासतै श्रीभगवान्‌नैं (निष्ठा) या पदविषे एकवचन कथन करा है । जो कदाचित् स्वतंत्र दोनों निष्ठा भगवान्‌कूं अभिमत होतीयां । तौ निष्ठे या प्रकारके द्विवचनकूं भगवान् कथन करता । इसी अर्थकूं (एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति) या वचनकरिकै श्रीभगवान् आगे कथन करैगा इति । अब तिसीही स्थितिरूप निष्ठाकूं दो प्रकारतारूपकरिकै वर्णन करे हैं । (ज्ञानयोगेन सांख्यानां इति) प्रत्यक् अभिन्न ब्रह्मकूं विषय करणेहारी जो बुद्धि है ताका नाम सांख्या है । ता सांख्या नामा बुद्धिकूं जो प्राप्त हुए हैं तिनोंका नाम सांख्य है । क्या जिन पुरुषोंनैं ब्रह्मचर्य आश्रमतैंही संन्यासकूं धारण करा है । तथा जिन पुरुषोंनैं वेदांतके श्रवणमननादिकोंकरिकै आत्मवस्तुकूं निश्चय करा है । तथा जे पुरुष ज्ञानभूमिकाविषे आरूढ हुए हैं । ऐसे शुद्धअंतःकरणवाले सांख्यनामा पुरुषोंकूं (तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः) इत्यादिक वचनोंकरिकै पूर्व ज्ञानरूप योगकरिकैही सा निष्ठा कथन करी है। इहां "युज्यते ब्रह्मणा अनेन स योगः" । अर्थ यह । यह अधिकारी पुरुष जिसकरिकै ब्रह्मके साथि जुडे है ताका नाम योग है इति । और यह अधिकारी पुरुष ता ज्ञानकरिकैही ब्रह्मके साथि अभेदभावकूं प्राप्त होवै है । यातैं सो ज्ञानही योगरूप है इति । और जिन पुरुषोंका अंतःकरण शुद्ध नहीं भया है । तथा जे पुरुष ज्ञानभूमिकाविषे आरूढ नहीं भए हैं । ऐसे कर्मोंके अधिकारीरूप योगी पुरुषोंकूं अंतःकरणकी शुद्धिद्वारा ज्ञानभूमिकाविषे आरूढ होणेवासतै (धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते) इत्यादिक वचनोंकरिकै कर्मरूप योगकरिकैही पूर्व सा निष्ठा कथन करी है । इहां 'युज्यते अंतःकरणशुद्ध्या अनेन स योगः' । अर्थ यह । यह अधिकारी पुरुष जिसकरिकै अंतःकरणकी शुद्धिके साथि जुडे है ताका नाम योग है इति । ऐसे अंतःकरणकी शुद्धि करणेहारे निष्काम कर्म हैं । यातैं ते निष्काम कर्मही योगरूप हैं । या कहणेतैं यह अर्थ सिद्ध भया।ज्ञान और कर्म या दोनोंका पूर्व उक्त प्रकारतैं समुच्चय तथा विकल्प संभवै नहीं । किंतु प्रथम निष्काम कर्मोंकरिकै शुद्ध हुआ है अंतःकरण जिनोंका ऐसे अधिकारी पुरुषोंकूं सर्व कर्मोंके संन्यासकरिकैही आत्मज्ञानकी प्राप्ति होवै है । यातैं चित्तकी शुद्धिरूप तथा चित्तकी अशुद्धिरूप दो अवस्थावोंके भेदकरिकै एकही तैं अर्जुनके प्रति हमनैं (एषा तेभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु)

इत्यादिक वचनोंकरिकै सा दो प्रकारकी निष्ठा कथन करी है । यातैं भूमिकाके भेदकरिकै एकही पुरुषके प्रति ज्ञान और कर्म या दोनोंका उपयोग संभव होइ सकै है । यातैं ज्ञान और कर्म या दोनोंके अधिकारके भेद हुएभी उपदेशकी व्यर्थता होवै नहीं इति । इसी अर्थके जनावणेवासतै श्रीभगवान् इस तृतीय अध्यायविषे अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं ता चित्तकी शुद्धिपर्यंत निष्कामकर्मोंके अनुष्ठानकी कर्त्तव्यता (न कर्मणामनारंभात्) इसतैं आदिलैकै (मोघं पार्थ स जीवति) इस वचनपर्यंत त्रयोदश श्लोकोंकरिकै कथन करैगा । और जिन पुरुषोंका चित्त शुद्ध हुआ है ऐसे ज्ञानवान् पुरुषोंकूं तौ ते कर्म किंचित्मात्रभी अपेक्षित नहीं हैं या अर्थकूं (यस्त्वात्मरतिः) इत्यादिक दो श्लोकोंकरिकै कथन करैंगे । और तिसतैं अनंतर (तस्मादसक्तः) इत्यादिक वचनोंकरिकै तौ बंधके हेतुरूप कर्मोंकूंभी फलकी इच्छातैं राहित्यरूप कौशल्यताकरिकै अंतःकरणकी शुद्धि तथा ज्ञानकी उत्पत्तिद्वारा मोक्षकीही कारणता संभवै है यह अर्थ कथन करैंगे । तिसतैं अनंतर (अथ केन प्रयुक्तोयं) या अर्जुनके प्रश्नका उत्थापन करिकै कामदोषकरिकैही काम्य कर्मोंकूं अंतःकरणके शुद्धिकी कारणता नहीं है । यातैं ता कामतैं रहित होइकै कर्मोंकूं करता हुआ तूं अर्जुन अंतःकरणकी शुद्धिकरिकै ज्ञानका अधिकारी होवैगा । यह अर्थ श्रीभगवान् इस तृतीय अध्यायकी समाप्तिपर्यंत कथन करैगा इति ॥ ३ ॥ ॥
तहां जैसे मृत्तिका, दंड, चक्र और कुलाल आदिक कारणोंके अभाव हुए घटरूप कार्यकी उत्पत्तिही होवै नहीं । तैसे निष्काम कर्मरूप कारणके अभाव हुए ज्ञानरूप कार्यकी उत्पत्तिही होवै नहीं या अर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनकेप्रति कथन करे हैं ।

(मू. श्लो.) न कर्मणामनारंभान्नैष्कर्म्यं पुरुषोश्नुते । न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥ ४ ॥ (पदच्छेदः) न । कर्मणां । अनारंभात् । नैष्कर्म्यं । पुरुषः । अश्नुते । न । च । संन्यसनात् । एव । सिद्धिं । समधिगच्छति ॥ ४ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन यह अधिकारी पुरुष निष्काम कर्मोंके न करणेतैं निष्कर्मभावकूं नहीं प्राप्त होवै है तथा संन्यासतैं भी ज्ञाननिष्ठाकूं नहीं प्राप्त होवै है ॥ ४ ॥ ॥ ४ ॥

टीका । "तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषंति यज्ञेन दानेन तपसा नाशकेन" । या श्रुतिनैं आत्मज्ञानकी प्राप्तिवासतै कथन करे जो अपणे अपणे वर्ण आश्रमके अनुसार वेदाध्ययन, यज्ञ, दान, तप इत्यादिक कर्म हैं । तिन नित्यनैमित्तिक कर्मोंकूं जो पुरुष निष्काम होइकै नहीं करे है । तिस

पुरुषका अंतःकरण शुद्ध होवै नहीं। और अंतःकरणकी शुद्धितैं विना यह पुरुष आत्मज्ञानकी प्राप्तिके योग्य होवै नहीं। यातैं निष्काम कर्मोंके नहीं करणेतैं सो अशुद्धचित्तवाला पुरुष सर्व कर्मोंतैं रहिततारूप नैष्कर्म्यकूं प्राप्त होवै नहीं। क्या ज्ञानरूप योगकरिकै ता निष्ठाकूं प्राप्त होवै नहीं इति। शंका। हे भगवन् श्रुतिविषे सर्व कर्मोंके संन्यासतैंही ता ज्ञाननिष्ठाकी प्राप्ति कथन करी है। तथा तिन कर्मोंकरिकै ज्ञाननिष्ठाके प्राप्तिका निषेधभी कथन करा है। तहां श्रुति। "एतमेव प्रव्राजिनो लोकमिच्छंतः प्रव्रजंति इति न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैकेऽमृतत्वमानशुः"। अर्थ यह। संन्यासीयोंकूं प्राप्त होणेयोग्य जो अद्वितीयब्रह्मरूप लोक है ता ब्रह्मके प्राप्तिकी इच्छा करते हुए यह अधिकारी पुरुष संन्यासकूं ग्रहण करे हैं इति। और पूर्व कोईक विद्वान् पुरुष ब्रह्मभावकी प्राप्तिरूप मोक्षकूं अग्निहोत्रादिक कर्मोंकरिकै तथा पुत्रादिक प्रजाकरिकै तथा सुवर्णादिक धनकरिकै नहीं प्राप्त होते भए हैं किंतु एक त्यागकरिकैही ता मोक्षरूप अमृतकूं प्राप्त होते भए हैं इति। यातैं सर्व कर्मोंके संन्यासतैंही सा ज्ञाननिष्ठा प्राप्त होइ सकै है। ता ज्ञाननिष्ठाकी प्राप्तिवासतै कर्मोंकूं करणा व्यर्थ है। ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् कहे हैं (न च संन्यसनात् इति) हे अर्जुन निष्काम कर्मोंके अनुष्ठान करिकै अंतःकरणकी शुद्धि करेतैं विनाही किया हुआ जो संन्यास है। ता संन्यासतैं सो अशुद्ध अंतःकरणवाला पुरुष मोक्षरूप फलकी प्राप्ति करणेहारी ज्ञाननिष्ठारूप सिद्धिकूं प्राप्त होवै नहीं। तात्पर्य यह। निष्काम कर्मोंके अनुष्ठानकरिकै जन्य जो चित्तकी शुद्धि है। ता चित्तशुद्धितैं विना प्रथम संन्यासही नहीं संभवै है। काहेतैं "यदहरेव विरजेततदहरेव प्रव्रजेत्" अर्थ यह। यह अधिकारी पुरुष जिस दिनविषे सर्व विषयसुखोंतैं वैराग्यकूं प्राप्त होवै तिसी दिनविषे संन्यासकूं ग्रहण करै इति। या श्रुतिनैं वैराग्यवान् पुरुषकूंही संन्यासका अधिकारी कह्या है। सो वैराग्य अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं होवै नहीं। और सो अशुद्धचित्तवाला पुरुष जो कदाचित् 'दंडग्रहणमात्रेण नरो नारायणो भवेत्'। अर्थ यह। दंडादिक चिन्होंके ग्रहणमात्रकरिकै यह पुरुष नारायणरूप होवै है इत्यादिक प्ररोचक वचनोंकूं श्रवण करिकै औत्सुक्यमात्रकरिकै संन्यासकूं ग्रहणभी करे है। तौभी ता अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं सो संन्यास ज्ञाननिष्ठारूप फलकी प्राप्ति करे नहीं। उलटा प्रत्यवायकीही प्राप्ति करे है। इहां कार्यके अधिकारका तथा फलका न विचार करिकै ता कार्यविषे प्रवृत्त करणेहारा जो आह्लादविशेष है ताका नाम औत्सुक्य है। तिसी औत्सुक्यकूं कुतूहल कहे हैं इति। और पूर्व सर्व कर्मोंके त्यागरूप संन्यासकरिकै मोक्षकी प्राप्तिकूं कथन करणेहारे जो श्रुतिवचन कहे थे। ते श्रुतिवचन शुद्ध-

चित्तवाले पुरुषपरि हैं । अशुद्धचित्तवाले पुरुषपरि हैं नहीं इति ॥ ४ ॥ ❁ ॥ तहां निष्काम कर्मोंके अनुष्ठानकरिकै जिस पुरुषका चित्त
शुद्ध नहीं भया है । सो पुरुष सर्वदा बहिर्मुखही रहे है । या अर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनके प्रति कहे हैं ।

॥५॥ (मू.श्लो.) न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् । कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥ ५ ॥ (पदच्छेदः) न । हि ।
कश्चित् । क्षणं । अपि । जातु । तिष्ठति । अकर्मकृत् । कार्यते । हि । अवशः । कर्म । सर्वः । प्रकृतिजैः । गुणैः ॥५॥ (पदार्थः)
हे अर्जुन जिस कारणतें कोईभी अज्ञानी पुरुष कदाचित् क्षणमात्र भी कर्मोंकूं नहीं करता हुआ नहीं स्थित होवै है जिस का-
रणतें प्रकृतिजन्य सत्त्वादिक गुणोंनें अस्वतंत्र सर्व अज्ञानी जनोंकेप्रति लौकिक वैदिक कर्म कराईते हैं ॥ ५ ॥

टीका । हे अर्जुन जिस पुरुषनैं मनसहित इंद्रियोंकूं अपणे वश नहीं करा है । ऐसा अजित इंद्रिय कोईभी पुरुष जिस कारणतें कदाचित् एक क्षण-
मात्र कालपर्यंतभी खानपानादिक लौकिक कर्मोंकूं तथा अग्निहोत्रादिक वैदिक कर्मोंकूं नहीं करता हुआ स्थित होवै नहीं । किंतु ऐसा अजित इंद्रिय
पुरुष तिन लौकिक वैदिक कर्मोंकूं करता हुआही स्थित होवै है । तिस कारणतें ता अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं सर्व कर्मोंका संन्यास करणा संभवता
नहीं इति । शंका । हे भगवन् सो अशुद्धचित्तवाला अविद्वान् पुरुष तिन लौकिक वैदिक कर्मोंकूं नहीं करता हुआ नहीं स्थित होवै है किंतु तिन कर्मोंकूं
करता हुआही स्थित होवै है याकेविषे क्या कारण है । ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् कहे हैं (कार्यते हि इति) हे अर्जुन मूलप्रकृतितैं
उत्पन्न भये जो सत्त्व, रज, तम, यह तीन गुण हैं । अथवा प्रकृति नाम स्वभावका है ता स्वभावरूप प्रकृतितैं उत्पन्न भये जो रागद्वेषादिक गुण
हैं । तिन प्रकृतिजन्य गुणोंनैं जिस कारणतैं चित्तशुद्धितैं रहित अस्वतंत्र सर्व प्राणीयोंके प्रति ते लौकिक वैदिक सर्व कर्म कराईते हैं । अथवा का-
यिक वाचिक मानस यह सर्व कर्म कराईते हैं । तिस कारणत अशुद्धचित्तवाला कोईभी अविद्वान् पुरुष तिन कर्मोंकूं नहीं करता हुआ स्थित होवै
नहीं । किंतु तिन प्रकृतिजन्य गुणोंकरिकै चलायमान करा हुआ यह पराधीन अज्ञानी पुरुष सर्व कालविषे तिन कर्मोंकूं करता हुआही स्थित होवै ॥५॥
है । ऐसे अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं सर्व कर्मोंका संन्यास करणा संभवता नहीं । जबी ता अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं सो संन्यासही नहीं संभवै है ।
तबी ता अशुद्धचित्तवाले पुरुषकूं ता संन्यासजन्यज्ञाननिष्ठा नहीं संभवै है याकेविषे क्या कहणा है इति ॥ ५ ॥ ❁ ॥ किंवा जिस पुरुषनैं

निष्काम कर्मोंके अनुष्ठानतैं अपणे चित्तकूं शुद्ध नहीं करा है । किंतु औत्सुक्यमात्रकरिकै प्रथम संन्यासकूंही ग्रहण करा है । ऐसा अशुद्ध चित्तवाला पुरुष ता संन्यासके फलकूं प्राप्त होवै नहीं । या अर्थकूं श्रीभगवान् कथन करे हैं ।

(मू. श्लो.) कर्मेंद्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् । इंद्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥ ६ ॥ (पदच्छेदः) कर्मेंद्रियाणि । संयम्य । यः । आस्ते । मनसा । स्मरन् । इंद्रियार्थान् । विमूढात्मा । मिथ्याचारः । सः । उच्यते ॥ ६ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन जो मूढात्मा पुरुष वाकादिक कर्मइंद्रियोंकूं निग्रह करिकै शब्दादिक विषयोंकूं मनकरिकै स्मरण करता हुआ स्थित होवै है सो पुरुष मिथ्या आचारवाला कह्या जावै है ॥ ६ ॥

टीका । रागद्वेषकरिकै दूषित है अंतःकरण जिसका ऐसा अशुद्धअंतःकरणवाला जो पुरुष केवल औत्सुक्यमात्रकरिकै वाक् पाणि पाद आदिक कर्म इंद्रियोंका निरोध करिकै क्या बाह्यइंद्रियोंकरिकै तिन कर्मोंकूं नहीं करता हुआ रागद्वेषकरिकै प्रेरित मनकरिकै शब्दस्पर्शादिक विषयोंकूं स्मरण करता हुआ स्थित होवै है । आत्मतत्त्वकूं स्मरण करता हुआ स्थित होता नहीं । क्या हमनैं सर्व कर्मोंका संन्यास करा है या प्रकारके अभिमान करिकै जो पुरुष सर्व कर्मोंतैं रहित हुआ स्थित होवै है । सो पुरुष मिथ्या आचारवाला कह्या जावै है । तात्पर्य यह । तिस पुरुषका अंतःकरण शुद्ध हुआ नहीं । यातैं ज्ञाननिष्ठारूप फलकी प्राप्तिके अयोग्य हुआ सो पुरुष पापआचरणवाला कह्या जावै है इति । यह वार्त्ता धर्मशास्त्रविषेभी कही है । तहां श्लोक । " त्वंपदार्थविवेकाय संन्यासः सर्वकर्मणां । श्रुत्येहविहितो यस्मात्तत्त्यागी पतितो भवेत् " । अर्थ यह । जिस कारणतैं इस अधिकारी लोकविषे श्रुतिभगवतीनैं त्वंपदार्थ आत्माके विचार करणेवास्तैही सर्व कर्मोंका संन्यास विधान करा है । तिस कारणतैं जो अशुद्धचित्तवाला पुरुष औत्सुक्यमात्रतैं ता संन्यासकूं ग्रहण करिकै त्वंपदार्थ आत्माका विचार करता नहीं । सो बहिर्मुख संन्यासी पतित होवै है इति । यातैं अशुद्धअंतःकरणवाला पुरुष ता संन्यासतैं ज्ञाननिष्ठारूप सिद्धिकूं प्राप्त होवै नहीं यह जो वार्त्ता श्रीभगवान्नैं कथन करी है सो यथार्थ है इति ॥ ६ ॥ ❀ ॥ तहां चित्तशुद्धितैं विना केवल औत्सुक्यमात्रकरिकै जो सर्व कर्मोंका संन्यास है । ता संन्यासकूं न करिकै यह अधिकारी पुरुष अपणे चित्तकी शुद्धिवास्तै शास्त्रविहित निष्काम कर्मोंकूंही करै । या अर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनके प्रति कथन करे हैं ।

(मू. श्लो.) यस्त्विंद्रियाणि मनसा नियम्यारभतेर्ऽजुन। कर्मेंद्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥ ७ ॥ (पदच्छेदः) यः। तु।
इंद्रियाणि। मनसा। नियम्य। आरभते। अर्जुन। कर्मेंद्रियैः। कर्मयोगं। असक्तः। सः। विशिष्यते ॥ ७ ॥ (पदार्थः)
हे अर्जुन जो पुरुष मनसहित श्रोत्रादिक ज्ञानइंद्रियोंकूं रोकिकरिकै फलइच्छातैं रहित हुआ वाकादिक कर्मइंद्रियोंकरिकै निष्का-
म कर्मोंकूं करे है सो पुरुष अशुद्धचित्तवाले संन्यासीतैं अत्यंत श्रेष्ठ है ॥ ७ ॥

टीका। हे अर्जुन जो अधिकारी पुरुष श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसन और घ्राण या पंच ज्ञानइंद्रियोंकूं मनसहित रोकिकरिकै क्या पापके उत्पत्तिका हेतु
जो शब्दादिक विषयोंकी आसक्ति है ता विषयासक्तितैं तिन श्रोत्रादिक इंद्रियोंकूं निवृत्त करिकै अथवा विवेकयुक्त मनकरिकै तिन श्रोत्रादिक इंद्रि-
योंकूं रोकिकरिकै वाक्, पाणि आदिक कर्मइंद्रियोंकरिकै शास्त्रविहित कर्मोंकूं करे है। परंतु ता कर्मोंके फलकी इच्छा करता नहीं। सो निष्काम
कर्मोंके करणेहारा अधिकारी पुरुष पूर्व उक्त अशुद्धअंतःकरणवाले मिथ्याचार संन्यासीतैं बहुत श्रेष्ठ है। इसी विलक्षणताके जनावणेवासतै
श्रीभगवान्नैं मूलश्लोकविषे (यस्तु) यह तु शब्द कथन करा है। तात्पर्य यह। हे अर्जुन या महान् आश्चर्यकूं तूं देख। तिन दोनों पुरुषोंकूं यद्यपि
परिश्रम तौ तुल्यही होवै है। तथापि एक पुरुष तौ वाकादिक कर्मइंद्रियोंकूं रोकिकरिकै मनसहित श्रोत्रादिक ज्ञानइंद्रियोंकूं विषयोंविषे प्रवृत्त कर-
ता हुआ परम पुरुषार्थरूप फलतैं रहित होवै है। और दूसरा पुरुष तौ मनसहित श्रोत्रादिक ज्ञानइंद्रियोंकूं शब्दादिक विषयोंतैं निवृत्तकरिकै वाका-
दिक कर्मइंद्रियोंकरिकै कर्मोंकूं करता हुआभी परम पुरुषार्थकूं प्राप्त होवै है। यातैं चित्तशुद्धितैं रहित संन्यासीतैं सो निष्काम कर्मोंके करणेहारा पुरुष
बहुत श्रेष्ठ है इति ॥ ७ ॥ ❀ ॥ जिस कारणतैं अशुद्धअंतःकरणवाले संन्यासीतैं निष्काम कर्मोंके करणेहारा पुरुष बहुत श्रेष्ठ है। तिस कार-
णतैं तूं मनसहित ज्ञानइंद्रियोंकूं रोकिकरिकै वाकादिक कर्मइंद्रियोंकरिकै नित्यनैमित्तिक कर्मोंकूं कर। या अर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनके प्रति कथन करे हैं।

(मू. श्लो.) नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः। शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥ ८ ॥ (पदच्छेदः) नियतं। कुरु।
कर्म। त्वं कर्म। ज्यायः। हि। अकर्मणः। शरीरयात्रा। अपि। च। ते। न। प्रसिद्ध्येत्। अकर्मणः ॥ ८ ॥ (पदार्थः)

सतै जो नित्यनैमित्तिक कर्म करीते हैं तिन कर्मोंका नाम यज्ञार्थ कर्म है। ऐसे निष्काम कर्मोंतें भिन्न जो स्वर्गादिक फलोंकी प्राप्तिवासतै काम्य कर्म हैं। तिन काम्य कर्मोंविषे प्रवृत्त हुए यह कर्मोंके अधिकारी जनही तिन काम्य कर्मोंकरिकै बंधायमान होवै हैं। और परमेश्वरके आराधनअर्थ करे जो कर्म हैं तिन निष्काम कर्मोंकरिकै यह अधिकारी जन बंधायमान होवै नहीं। यातैं "कर्मणा बध्यते जंतुः" यह पूर्व उक्त स्मृतिभी केवल काम्यकर्मोंविषेही बंधनकी हेतुता कथन करे है। निष्काम कर्मोंविषे बंधनकी हेतुता कथन करै नहीं। यातैं हे अर्जुन तूं स्वर्गादिक फलोंकी इ-च्छातैं रहित होइकै केवल परमेश्वरके आराधनअर्थ श्रद्धाभक्तिपूर्वक तिन नित्यनैमित्तिक कर्मोंकूं कर इति ॥ ९ ॥ ❀ ॥ किंवा भगवान् प्र-जापतिके वचनतैंभी या अधिकारी पुरुषनैं ते कर्मही करणेकूं योग्य हैं। या अर्थकूं श्रीभगवान् चारि श्लोकोंकरिकै अर्जुनके प्रति कथन करे हैं।

(मू. श्लो.) सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ १० ॥ (पदच्छेदः) सहयज्ञाः। प्रजाः। सृष्ट्वा। पुरा। उवाच। प्रजापतिः। अनेन। प्रसविष्यध्वं। एषः। वः। अस्तु। इष्टकामधुक ॥ १० ॥ (पदार्थः) हे अ-र्जुन कल्पके आदिविषे प्रजापति यज्ञके अधिकारी प्रजाकूं उत्पन्न करिकै यह वचन कहता भया है प्रजा इस यज्ञकरिकै तुम वृद्धिकूं प्राप्त होवो जिस कारणतैं यह यज्ञही तुमारेकूं मनवांछित फलोंकी प्राप्ति करणेहारा होवो ॥ १० ॥

टीका। श्रुतिस्मृतियोंकरिकै विधान करे जो स्ववर्णआश्रमके यज्ञादिरूप कर्म हैं तिन कर्मोंके सहित जे वर्त्तमान होवैं तिनोंका नाम सहयज्ञ है। अर्थात् कर्मोंके अधिकारियोंका नाम सहयज्ञ है। ऐसे यज्ञादिरूप कर्मोंके अधिकारी ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य या त्रैवर्णिक प्रजाकूं सृष्टिके आदिकालविषे रचिकरिकै परम कृपालु भगवान् प्रजापति ता त्रैवर्णिक प्रजाके प्रति या प्रकारका वचन कहता भया। हे प्रजा अपणे अपणे वर्ण आश्रमकरिकै उ-चित जो यह यज्ञादिरूप धर्म है ता यज्ञादिरूप धर्मकरिकै तुम उत्तरउत्तरकालविषे वृद्धिकूं प्राप्त होवौ। शंका। इस यज्ञादिरूप धर्मकरिकै किस प्र-कार वृद्धि होवै है। ऐसी शंकाके हुए प्रजापति कहे हैं (एष वोऽस्त्विष्टकामधुक् इति) हे प्रजा यह यज्ञादिरूप धर्मही तुम अधिकारी जनोंकूं मन-वांछित फलोंकी प्राप्ति करणेहारा होवो इति। शंका। (सहयज्ञाः) या वचनविषे करा जो यज्ञका ग्रहण है। सो यज्ञका ग्रहण अवश्य करणे-योग्य नित्यनैमित्तिक कर्मोंकाही उपलक्षक है। काम्य कर्मोंका उपलक्षक है नहीं। काहेतैं तिन कर्मोंके नहीं करणेतैं प्रत्यवायकी प्राप्ति आगे कथन

करणी है । सा प्रत्यवायकी प्राप्ति नित्यनैमित्तिक कर्मोंके नहीं करणेतैंही होवै है । काम्य कर्मोंके नहीं करणेतैं कोई प्रत्यवायकी प्राप्ति होवै नहीं । किंवा इस गीताशास्त्रविषे तिन काम्य कर्मोंके कहणेका कोई प्रसंगभी है नहीं । उलटा (मा कर्मफलहेतुर्भूः) इस वचनकरिकै तिन काम्य कर्मोंका निषेधही करा है । यातैं निष्काम कर्मोंके प्रसंगविषे यह यज्ञादिरूप धर्म तुमारेकूं मनवांछित फलोंकी प्राप्ति करैगा यह फलका कथन असंगत है । समाधान । काम्य कर्मोंकी न्यांई तिन नित्यनैमित्तिक कर्मोंकाभी सो आनुषंगिक फल संभव होइ सकै है । यह वार्त्ता आपस्तंब ऋषिनैंभी कथन करी है । "तद्यथाम्रे फलार्थे निर्मितेच्छाया गंधे इत्यनूत्पद्येते एवं धर्म चर्यमाणमर्था अनूत्पद्यंते नोचेदनूत्पद्यंते न धर्महानिर्भवतीति "। अर्थ यह । जैसे किसी पुरुषनैं फलोंकी प्राप्तिवासतै लगाया हुआ जो आम्रका वृक्ष है ता आम्रवृक्षके छाया सुगंध यह दोनों आनुषंगिक फल ता लगावणेहारे पुरुषकूं अवश्य प्राप्त होवै हैं । तैसे या अधिकारी पुरुषनैं स्वधर्म जानिकरिकै करे जो नित्यनैमित्तिक कर्म हैं । तिन कर्मोंतैं अनंतर ता कर्मकर्त्ता पुरुषकूं मनवांछित पदार्थोंकी प्राप्तिरूप आनुषंगिक फल अवश्य होवै है । जो कदाचित् ता कर्मकर्त्ता पुरुषकूं सो आनुषंगिक फल नहींभी प्राप्त होवै । तौभी ता नित्यनैमित्तिकरूप धर्मकी हानि होवै नहीं । जिस कारणतैं अंतःकरणकी शुद्धिद्वारा मोक्षरूप परम फल ता पुरुषकूं अवश्यकरिकै प्राप्त होवै है इति । शंका । काम्यकर्मोंकी न्यांई जो कदाचित् नित्यकर्मोंकाभी फल अंगीकार करौगे तौ काम्यकर्मोंतैं नित्यकर्मोंविषे विलक्षणता सिद्ध नहीं होवैगी । समाधान । काम्यकर्म तथा नित्यकर्म या दोनोंविषे फलकी कारणताके समान हुएभी फलकी इच्छाकरिकै करे हुए कर्मकूं काम्यकर्म कहे हैं । और फलकी इच्छातैं रहित होइकै करे हुए कर्मकूं नित्यकर्म कहे हैं । या रीतिसैं तिन काम्यकर्मोंतैं नित्यकर्मोंविषे विलक्षणता संभवै है । और अनिच्छित फलकीभी वस्तुके स्वभावतैंही उत्पत्ति अंगीकार किये हुए तिन दोनोंविषे विशेषता संभवै नहीं । इस वार्त्ताकूं आगे विस्तारकरिकै निरूपण करैंगे । यातैं यह यज्ञादिरूप धर्म तुमारेकूं मनवांछित फलोंकी प्राप्ति करणेहारा होवो यह वचन असंगत नहीं है किंतु यथार्थ है । तहां स्मृति । " संध्यामुपासते ये तु सततं संशितव्रताः । विधूतपापास्ते यांति ब्रह्मलोकमनामयं " । अर्थ यह । जे पुरुष निरंतर श्रद्धाभक्तिपूर्वक संध्याकूं उपासना करे हैं । ते पुरुष सर्व पापोंतैं रहित होइकै रोगादिक विकारोंतैं रहित ब्रह्मलोककूं प्राप्त होवै हैं इति । इत्यादिक अनेक वचनोंकरिकै संध्याउपासनादिक नित्यकर्मोंका ब्रह्मलोकादिकोंकी प्राप्तिरूप आनुषंगिक फल कथन करा है इति ॥ १० ॥ ॥ शंका । हे भगवन् यज्ञादिरूप धर्मकूं मनवांछित फलोंके प्राप्तिकी हेतुता किस प्रकार है । ऐसी शंकाके हुए सो प्रजापति ता प्रकारकूं निरूपण करे हैं ।

(मू. श्लो.) देवान्भावयतानेन ते देवा भावयंतु वः । परस्परं भावयंतः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥ ११ ॥ (पदच्छेदः) देवान् । भावयत । अनेन । ते । देवाः । भावयंतु । वः । परस्परं । भावयंतः । श्रेयः । परं । अवाप्स्यथ ॥ ११ ॥ (पदार्थः) हे प्रजा तुम अधिकारी इस यज्ञादिरूप धर्मकरिकै इंद्रादिक देवतावोंकूं संतुष्ट करो तिसतैं अनंतर ते इंद्रादिक देवता तुमारेकूं संतुष्ट करैं इस प्रकार परस्पर संतुष्ट करते हुए तुम दोनों परम श्रेयकूं प्राप्त होवौंगे ॥ ११ ॥

टीका । हे प्रजा तुम सर्व यजमान इस यज्ञादिरूप धर्मकरिकै इंद्रादिक देवतावोंकूं संतुष्ट करो । और ता यज्ञविषे हविर्भागोंकरिकै तुमोंनैं संतुष्ट करे हुए जो इंद्रादिक देवता हैं ते इंद्रादिक देवता जलकी वृष्टि आदिकोंतैं अन्नकी उत्पत्तिद्वारा तुम यजमानोंकूं संतुष्ट करैं । इस प्रकार परस्पर संतुष्ट करते हुए तुम प्रजा तथा इंद्रादिक देवता दोनोंही मनवांछित अर्थरूप परम श्रेयकूं प्राप्त होवौंगे । तहां तुमारेकूं संतुष्ट करणेतैं इंद्रादिक देवता तौ तृप्तिरूप परम श्रेयकूं प्राप्त होवैंगे । और इंद्रादिक देवतावोंकूं संतुष्ट करणेतैं तुम प्रजा स्वर्गरूप परम श्रेयकूं प्राप्त होवौंगे इति ॥ ११ ॥ ❁ ॥ किंवा ता यज्ञादिकरूप धर्मकरिकै तुमारेकूं केवल परलोकविषे स्थित स्वर्गादिरूप फलकीही प्राप्ति नहीं होवैगी । किंतु इस लोकविषे स्थित अन्न, सुवर्ण, पशु आदिक फलकीभी प्राप्ति होवैगी । या अर्थकूं प्रजापति कथन करे हैं ।

(मू. श्लो.) इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यंते यज्ञभाविताः । तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥ १२ ॥ (पदच्छेदः) इष्टान् । भोगान् । हि । वः । देवाः । दास्यंते । यज्ञभाविताः । तैः । दत्तान् । अप्रदाय । एभ्यः । यः । भुंक्ते । स्तेनः । एव । सः ॥ १२ ॥ (पदार्थः) जिस कारणतैं यज्ञकरिकै संतुष्ट हुए यह देवता तुमारे तांई मनवांछित भोगोंकूं देवैंगे तिस कारणतैं तिन्ने देवतावोंनैं दीये हुए भोगोंकूं इन देवतावोंके तांई न देकरिकै जो पुरुष भोगे है सो पुरुष चोर ही है ॥ १२ ॥

टीका । हे प्रजा इस प्रकार श्रौत स्मार्त यज्ञरूप धर्मकरिकै संतुष्ट हुए जो इंद्रादिक देवता हैं । ते इंद्रादिक देवता तुम कर्मकर्त्ता यजमानोंके तांई अन्न, पशु, सुवर्ण इत्यादिक मनवांछित भोगोंकूं देवैंगे । और जैसे कोई पुरुष किसी अन्य पुरुषके प्रति ऋण देवै है । तैसे तिन इंद्रादिक देवतावोंनैं तुमारे तांई दीये जो अन्नादिक भोग हैं । तिन भोगोंकूं तिन इंद्रादिक देवतावोंके तांई न देकरिकै अर्थात् इंद्रादिक देवतावोंके उद्देशकरिकै व्री-

हियवादिक पदार्थोंका त्यागरूप जो वैश्वदेव, अग्निहोत्र, जातेष्टि इत्यादिक नित्यनैमित्तिक याग हैं तिनोंकूं न करिकै जो पुरुष केवल अपणे देहइंद्रियादिकोंकी पुष्टि करणेवासतै तिन अन्नादिक पदार्थोंकूं भोगे है। सो पुरुष तिन देवतावोंका चौरही है तथा कृतघ्न है । काहेतैं तिस पुरुषनैं देवतावोंके अन्नादिक पदार्थोंकूं तौ हरण करा है । और यज्ञादिकोंकरिकै तिन देवतावोंके ऋणकी निवृत्ति करी नहीं इति ॥ १२ ॥ ❀ ॥ किंवा तिन यज्ञादिक कर्मोंके न करणेतैं या अधिकारी पुरुषकूं केवल चौरभावकी तथा कृतघ्नताकी प्राप्ति होवै नहीं । किंतु तिन यज्ञादिक कर्मोंके नहीं करणेतैं या अधिकारी पुरुषकूं प्रत्यवायकीभी प्राप्ति होवै है । या अर्थकूं अन्वयव्यतिरेककरिकै निरूपण करे हैं ।

(मू. श्लो.) यज्ञशिष्टाशिनः संतो मुच्यंते सर्वकिल्बिषैः । भुंजते ते त्वघं पापा ये पचंत्यात्मकारणात् ॥ १३ ॥ (पदच्छेदः) यज्ञशिष्टाशिनः । संतः । मुच्यंते । सर्वकिल्बिषैः । भुंजते । ते । तु । अघं । पापाः । ये । पचंति । आत्मकारणात् ॥ १३ ॥ (पदार्थः) जे पुरुष यज्ञके शेष अन्नकूं भोजन करे हैं ते शिष्ट पुरुष सर्व पापोंनैं परित्याग करीते हैं तथा जे पापात्मा पुरुष केवल अपणे वासतैही अन्नकूं पकावे हैं ते पुरुष पापकूंही भोजन करे हैं ॥ १३ ॥

टीका । जे अधिकारी पुरुष ऋषियज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, भूतयज्ञ या पंच यज्ञोंकूं करिकै परिशेषतैं रहे हुए अमृतरूप अन्नकूं भोजन करे हैं । ते पुरुषही शिष्ट कहे जावै हैं । काहेतैं श्रद्धाभक्तिपूर्वक वेदविहित कर्मोंके करणेहारे पुरुषकूंही शास्त्रविषे शिष्ट कह्या है । ऐसे शिष्ट पुरुष सर्व पापोंनैं परित्याग करीते हैं । तात्पर्य यह । प्रमादकरिकै करे हुए जो पाप हैं । तथा पंचसूनारूप निमित्ततैं उत्पन्न हुए जो पाप हैं । तथा विहित कर्मोंके न करणेकरिकै प्राप्त भये जो पाप हैं । तिन सर्व पापोंतैं ते पुरुष रहित होवै हैं इति । इतनै कहणेकरिकै तिन यज्ञादिकोंके करणेहारे पुरुषकूं पापके प्राप्तिका अभाव कथन करा । अब तिन यज्ञादिक कर्मोंके नहीं करणेहारे पुरुषकूं प्रत्यवायके प्राप्तिका कथन करे हैं (भुंजते ते तु इति) तिन पंचमहायज्ञोंकूं नहीं करते हुए जे पापात्मा पुरुष केवल अपणे उदरके भरण करणेवासतैही अन्नकूं पकावै हैं । देवता, अतिथि आदिकोंके वासतै अन्नकूं पकावते नहीं । ते पुरुष केवल पापकूंही भोजन करे हैं । अन्नकूं भोजन करते नहीं । यद्यपि तिन पापात्मा पुरुषोंकी दृष्टिकरिकै तौ सो अन्न है । तथापि शास्त्रकी दृष्टिकरिकै तथा देवतावोंकी दृष्टिकरिकै सो अन्न पापरूपही है इति । इहां (पापाः अघं भुंजते) या वचनकरिकै यह अर्थ बोधन क-

रा। जे पुरुष तिन पंचयज्ञोंकूं न करिकै केवल अपणे उदरके भरण करणेवासतैही अन्नकूं पकावे हैं। ते पुरुष पूर्वही पंचसूनाकृत पापवाले तथा प्रमादकृत हिंसाजन्य पापवाले हुएभी पुनः वैश्वदेवादिक नित्यकर्मोंके नहीं करणेजन्य दूसरे पापकूं प्राप्त होवै हैं इति। तहां स्मृति। "कंडनी पेषणी चुल्ली उदकुंभी च मार्जनी। पंचसूना गृहस्थस्य ताभिः स्वर्गं न विंदति। पंचसूनाकृतं पापं पंचयज्ञैर्व्यपोहति"। अर्थ यह। गृहस्थ पुरुषोंके गृहविषे जीवोंकी हिंसा होणेके पंचस्थान होवै हैं। एक तौ ऊखलविषे अन्नके कूटणेतैं जीवोंकी हिंसा होवै है। और दूसरा पाषाणकी चक्कीविषे अन्नके पीसणेतैं जीवोंकी हिंसा होवै है। और तीसरा अन्नके पकावणेवासतै चुल्लेविषे अग्निके जगावणेतैं जीवोंकी हिंसा होवै है। और चौथा पात्रोंविषे जलके भरणेतैं जीवोंकी हिंसा होवै है। और पंचमा मृत्तिकाजलादिकोंसैं घरके मार्जन करणेतैं जीवोंकी हिंसा होवै है। ता पंच प्रकारकी जीवहिंसाकरिकै यह गृहस्थ पुरुष स्वर्गकूं प्राप्त होता नहीं। और तिन पंच हिंसास्थानोंतैं उत्पन्न भये जो पाप हैं। ते पाप पंचयज्ञोंकरिकै निवृत्त होवै हैं इति। ते पंचयज्ञ यह हैं। तहां श्लोक। "ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा। नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत्"। अर्थ यह। यह ब्राह्मणादिक गृहस्थ पुरुष दिनदिनविषे ऋषियज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, पितृयज्ञ यह पंच यज्ञ यथाशक्ति करैं। इन पंच यज्ञोंका परित्याग कदाचित्भी नहीं करैं इति। तहां वेदका पठन पाठन करणा तथा संध्योपासन करणा याका नाम ऋषियज्ञ है। और अग्निहोत्रादिकोंका करणा याका नाम देवयज्ञ है। और बलि, वैश्वदेवकूं करणा याका नाम भूतयज्ञ है। और गृहविषे प्राप्त हुए अतिथिका अन्नादिकोंकरिकै संतोष करणा याका नाम मनुष्ययज्ञ है। और श्राद्ध तर्पणकूं करणा याका नाम पितृयज्ञ है इति। तिन यज्ञोंके नहीं करणेहारे गृहस्थ पुरुषोंकूं दोषकी प्राप्ति पाराशरस्मृतिविषेभी कथन करी है। तहां श्लोक। "वैश्वदेवविहीना ये आतिथ्येन विवर्जिताः। सर्वे ते नरकं यांति काकयोनिं व्रजंति ते। काष्ठभारसहस्रेण घृतकुंभशतेन च। अतिथिर्यस्य भग्नाशस्तस्य होमो निरर्थकः"। अर्थ यह। जे ब्राह्मणादिक गृहस्थ वैश्वदेव करणेतैं रहित हैं। तथा अतिथिके प्रति भोजन देणेतैं रहित हैं। ते पुरुष मरिकरिकै नरककूं प्राप्त होवै हैं। तिसतैं अनंतर काकयोनिकूं प्राप्त होवै हैं इति। किंवा जिस गृहस्थ पुरुषके गृहतैं अतिथि पुरुष अन्नादिकोंकी प्राप्तितैं विना निराश चल्या जावै है। तिस गृहस्थ पुरुषनैं काष्ठोंके सहस्र भारोंकरिकै तथा घृतके शत कुंभोंकरिकै करा हुआ जो होम है। सो होम ता पुरुषकूं किंचित्मात्रभी फलकी प्राप्ति करै नहीं इति। अतिथिका लक्षण पाराशरस्मृतिविषे यह कह्या है। तहां श्लोक। "दूराध्वोपगतं श्रांतं वैश्वदेव उपस्थितं। अतिथिं तं विजानीयान्नातिथिः पूर्वमागतः। चौरो वा यदि चांडालः शत्रुर्वा पितृघातकः। वैश्वदेवे तु संप्राप्ते सोतिथिः सर्वसंगमः। न पृच्छेद्गोत्रचरणे

स्वाध्यायं च व्रतानि च। हृदयं कल्पयेत्तस्मिन्सर्वदेवमयो हि सः"। अर्थ यह। जो पुरुष दूर मार्गतैं चलिके आया होवै तथा थक्या होवै तथा वैश्वदेव- के करणेके कालविषे प्राप्त होवै ताकूं अतिथि जानणा। और जो अपणे पुरोहितादिक पूर्वही तहां प्राप्त हैं ते पुरोहितादिक अतिथि नहीं कहे जावे हैं इति। और वैश्वदेव करणेके कालविषे ब्राह्मणादिक गृहस्थ पुरुषोंके गृहविषे जो कोई अन्नार्थी चौर आवै अथवा चांडाल आवै अथवा शत्रु आवै अथवा पिताके हनन करणेहारा आवै सो अन्नार्थी पुरुष अतिथि जानणा तथा सर्व सत्संगादिकोंका कारण जानणा इति। किंवा यह गृहस्थ पुरुष गृहविषे प्राप्त हुए ता अ- न्नार्थी अतिथिका गोत्र नहीं पूछै। तथा वेदकी शाखादिकभी नहीं पूछै तथा ऋग्वेदादिकोंका अध्ययनभी नहीं पूछै। तथा ब्रह्मचर्यादिक व्रतभी नहीं पूछै। किंतु सो गृहस्थ पुरुष ता अतिथिविषे यह अतिथि सर्वदेवमय विष्णुरूप है या प्रकारकी भावना करिकै ता अतिथिके प्रति अन्नादिक देवै इति। यातैं जे ब्राह्मणादिक गृहस्थ पुरुष पूर्व उक्त पंचयज्ञोंकूं न करिकै केवल अपणे उदर भरणेवासतैही अन्नकूं पकावे हैं। ते पुरुष अन्नरू- पकरिकै स्थित पापकूंही भोजन करे हैं इति ॥ १३ ॥ ❁ ॥ किंवा केवल पूर्व उक्त प्रजापतिके वचनमात्रतैंही ते यज्ञादिक कर्म करणेकूं योग्य नहीं हैं। किंतु या जगतरूप चक्रके प्रवृत्तिका हेतु होणेतैंभी ते यज्ञादिक कर्म करणेकूं योग्य हैं। या अर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनके प्रति तीन श्लोकों- करिकै कथन करे हैं।

(मू. श्लो.) अन्नाद्भवंति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः। यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥ (पदच्छेदः) अन्नात्। भवंति। भूतानि। पर्जन्यात्। अन्नसंभवः। यज्ञात्। भवति। पर्जन्यः। यज्ञः। कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन अन्नतैं शरीर उत्पन्न होवै है और ता अन्नका जन्म जलकी वृष्टितैं होवै है और सा जलकी वृष्टि अपूर्वरूप धर्मतैं उत्पन्न होवै है और सो अपूर्वरूप धर्म कर्मतैं उत्पन्न होवै है ॥ १४ ॥

टीका। हे अर्जुन भोजनद्वारा पुरुष स्त्रीयोंके शरीरविषे प्राप्त होइकै शुक्रशोणितरूपकरिकै परिणामकूं प्राप्त भया जो व्रीहियवादिक अन्न है। तिस अ- न्नतैंही सर्व मनुष्यादिक प्राणीयोंके शरीर उत्पन्न होवै हैं। और ता व्रीहियवादिक अन्नकी उत्पत्ति जलकी वृष्टितैं होवै है। यह वार्त्ता सर्व प्राणी- योंकूं प्रत्यक्ष सिद्ध है और कारीरीइष्टि अग्निहोत्र आदिकोंतैं उत्पन्न भया जो धर्म है। जिस धर्मकूं शास्त्रविषे अपूर्व अदृष्ट या नामकरिकै कथन करे हैं।

ता धर्मरूप यज्ञतैं सा जलकी वृष्टि उत्पन्न होवै है । तहां मनुस्मृति । "अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते । आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः" । अर्थ यह । वैदिक अग्निविषे प्रातःसायंकालमैं श्रद्धाभक्तिपूर्वक पाई हुई जो घृतादिक पदार्थोंकी आहुति हैं सा आहुति सूक्ष्मरूपकरिकै आदित्यविषे स्थित होवै है । ता आहुतिविशिष्ट आदित्यतैं मेघोंद्वारा जलकी वृष्टि उत्पन्न होवै है । ता जलकी वृष्टितैं व्रीहियवादिक अन्न उत्पन्न होवै हैं । और ता अन्नतैं यह मनुष्यादिक शरीर उत्पन्न होवै हैं इति । और सो धर्मरूप यज्ञ अग्निहोत्र कारीरी इष्टि आदिक कर्मोंतैं उत्पन्न होवै है इति ॥ १४ ॥ ❀ ॥ किंच

(मू॰श्लो॰) कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवं । तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितं ॥ १५ ॥ (पदच्छेदः) कर्म । ब्रह्मोद्भवं । विद्धि । ब्रह्म । अक्षरसमुद्भवं । तस्मात् । सर्वगतं । ब्रह्म । नित्यं । यज्ञे । प्रतिष्ठितं ॥ १५ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन ता अग्निहोत्रादिक कर्मकूं तूं वेदतैं उत्पन्न हुआ जान और ता वेदकूं परमात्मादेवतैं उत्पन्न हुआ जान तिस कारणतैंही सर्व अर्थका प्रकाशक तथा नाशतैं रहित सो वेद ता धर्मरूप यज्ञविषे स्थित है ॥ १५ ॥

टीका । ब्रह्म नाम वेदका है सो वेदरूप ब्रह्म है प्रमाण जिसविषे ताका नाम ब्रह्मोद्भव है । तिस अग्निहोत्रादिक कर्मकूं तूं ब्रह्मोद्भव जान । तात्पर्य यह । वेदनैं विधान करा जो अग्निहोत्रादिक कर्म है । ता कर्मकूंही तूं अपूर्वरूप धर्मका साधन जान । दूसरे पाखंडशास्त्रोंनैं प्रतिपादन करे हुए कर्मोंकूं तुमनैं ता अपूर्वरूप धर्मका साधन जाणना नहीं इति । शंका । हे भगवन् तिन पाखंडशास्त्रोंकी अपेक्षाकरिकै वेदविषे कौन विलक्षणता है । जिस विलक्षणताकरिकै वेदप्रतिपादित अर्थही धर्मरूप होवै है । दूसरे पाखंडशास्त्रप्रतिपादित अर्थ धर्मरूप नहीं होवै हैं । ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् ता वेदविषे दूसरे पाखंडशास्त्रोंतैं विलक्षणता कथन करे हैं । (ब्रह्माक्षरसमुद्भवं इति) हे अर्जुन भ्रम, प्रमाद, करणाऽपाटव, विप्रलिप्सा इत्यादिक सर्व दोषोंतैं रहित जो परमात्मा देव है । ता अक्षर परमात्मादेवतैंही पुरुषके निःश्वासोंकी न्यांई विनाही प्रयत्नतैं सो ऋग्, यजुष्, साम अथर्वणरूप वेद प्रादुर्भाव हुआ है । या कारणतैं भ्रम प्रमाद आदिक दोषोंकी शंकातैं रहित हुए ते अपौरुषेय वेदोंके वचनही धर्मरूप अतिइंद्रिय अर्थविषयक प्रमाकी जनकताकरिकै प्रमाणरूप हैं । भ्रम प्रमाद आदिक दोषोंवाले पुरुषोंकरिकै रचित पाखंडवाक्य ता अतिइंद्रिय धर्मविषयक प्रमाकूं उत्पन्न करै नहीं । यातैं ते पाखंडशास्त्र ता धर्मविषे प्रमाणरूप हैं नहीं । इहां अन्य पदार्थविषे अन्य बुद्धिका नाम भ्रम है । और अवश्य करणेयो-

ग्य अर्थकूंभी नहीं करणा याका नाम प्रमाद है। और नेत्रादिक करणोंविषे वस्तुके यथार्थ ग्रहण करणेकी नहीं शक्ति होणी याका नाम करणाऽपाटव है। अन्य लोकोंके वंचन करणेकी इच्छाका नाम विप्रलिप्सा है इति। तहां अक्षरपरमात्मा देवतैंही वेदोंका प्रादुर्भाव होवै है यह वार्त्ता श्रुतिविषेभी कही है। तहां श्रुति। "अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वांगिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि व्याख्यानानि इति"। अर्थ यह। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद यह चारि वेद इस महान् परमात्मा देवके निःश्वासरूप हैं। ते चारों वेद, इतिहास, पुराण, विद्या, उपनिषद्, श्लोकसूत्र, अनुव्याख्यान, व्याख्यान, या भेदकरिकै अष्ट प्रकारके हैं इति। इतिहास, पुराण आदिक अष्टोंका अर्थ आत्मपुराणके सप्तम अध्यायविषे हम विस्तारतैं निरूपण करि आये हैं। इस प्रकार साक्षात्परमात्मा देवतैंही उत्पन्न होणेतैं सर्व अर्थका प्रकाशक तथा अविनाशी जो वेद है। सो वेद अतिइंद्रिय धर्मरूप यज्ञविषे अपणे तात्पर्यकरिकै स्थित होवै है। यातैं पाखंडशास्त्रकरिकै प्रतिपादित निकृष्ट धर्मका परित्याग करिकै या अधिकारी पुरुषनैं वेदप्रतिपादित धर्मही अनुष्ठान करणा इति ॥ १५ ॥ ❀ शंका। हे भगवन् इस प्रकार वेदादिकोंकी उत्पत्ति होवौ ता कहणेकरिकै इहां प्रसंगविषे क्या फल सिद्ध होवै है। ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् कहे हैं।

(मू. श्लो·) एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः। अघायुरिंद्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥ १६ ॥ (पदच्छेदः) एवं। प्रवर्तितं। चक्रं। न। अनुवर्तयति। इह। यः। अघायुः। इंद्रियारामः। मोघं। पार्थ। सः। जीवति ॥ १६ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन इस लोकविषे जो अधिकारी पुरुष इस प्रकार प्रवृत्त हुए चक्रकूं नहीं अंगीकार करे हैं सो पाप जीवन इंद्रियाराम पुरुष व्यर्थही जीवता है ॥ १६ ॥

टीका। हे अर्जुन प्रथम सर्वज्ञ परमेश्वरतैं सर्व अर्थकूं प्रकाश करणेहारे नित्य निर्दोष वेदका प्रादुर्भाव होवै है। तिसतैं अनंतर ता वेदउक्त कर्मोंका ज्ञान होवै है। ता कर्मोंके ज्ञानतैं अनंतर तिन कर्मोंके अनुष्ठानतैं अपूर्वरूप धर्मकी उत्पत्ति होवै है। तिस धर्मकी उत्पत्तितैं अनंतर जलकी वृष्टि होवै है। तिस जलकी वृष्टितैं व्रीहियवादिक अन्न उत्पन्न होवै हैं। ता अन्नतैं मनुष्यादिक भूत उत्पन्न होवै हैं। तिसतैं अनंतर तिन मनुष्यादिकोंकी पुनः कर्मोंविषे प्रवृत्ति होवै है। इस प्रकार सर्व जगतके निर्वाह करणेवासतै परमेश्वरनैं प्रवृत्त करा जो यह चक्र है तिस चक्रकूं जो अधिकारी पुरुष नहीं

अंगीकार करे है । सो पुरुष पापरूप जीवनवाला होणेतैं व्यर्थही जीवता है । अर्थात् तिस पुरुषके जीवनेतैं मरणही श्रेष्ठ है । काहेतैं ता शरीरका परित्याग करिकै दूसरे जन्मविषे ता पुरुषकूंभी कदाचित् धर्मका अनुष्ठान संभव होइ सकै है । तथा इस जन्मविषे वेदविहित कर्मोंके न करणेतैं जो पापका संग्रह होवै है तिसतैंभी रहित होवै है । यातैं ता पुरुषके जीवनेतैं मरणही श्रेष्ठ है । शंका । हे भगवन् ता पूर्व उक्त चक्रकूं नहीं अंगीकार करणेहारा जो ब्रह्मवेत्ता पुरुष है तिसकाभी जीवन निष्फल होवैगा । ऐसी अर्जुनकी शंकाके निवृत्त करणेवासतै श्रीभगवान् ता अज्ञानी पुरुषका विशेषण कहे हैं (इंद्रियाराम इति) श्रोत्रादिक इंद्रियोंकरिकै शब्दादिक विषयोंविषे जो पुरुष रमण करे है ताका नाम इंद्रियाराम है ऐसा विषयलंपट पुरुष केवल कर्मोंकाही अधिकारी होवै है । तिन कर्मोंका अधिकारी हुआभी जो पुरुष तिन कर्मोंकूं नहीं करै है । सो पुरुष तिन विहित कर्मोंके न करणेतैं केवल पापकाही संग्रह करता हुआ व्यर्थही जीवै है । और जीवन्मुक्त विद्वान् पुरुष इंद्रियाराम है नहीं । यातैं तिन कर्मोंके न करणेतैं सो विद्वान् पुरुष प्रत्यवायकूं प्राप्त होवै नहीं इति ॥ १६ ॥ ❀ ॥ किंवा । जो पुरुष इंद्रियाराम नहीं है तथा परमार्थ वस्तुकूं सर्वदा देखणेहारा है । सो विद्वान् पुरुष इस जगत्‌रूप चक्रके हेतुभूत कर्मोंका नहीं अनुष्ठान करता हुआभी प्रत्यवायकूं प्राप्त होवै नहीं । जिस कारणतैं सो विद्वान् पुरुष कृतकृत्यभावकूं प्राप्त हुआ है । या अर्थकूं श्रीभगवान् दो श्लोकोंकरिकै कथन करै हैं ।

(मू. श्लो.) यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः । आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥ १७ ॥ (पदच्छेदः) यः । तु । आत्मरतिः । एव । स्यात् । आत्मतृप्तः । च । मानवः । आत्मनि । एव । च । संतुष्टः । तस्य । कार्यं । न । विद्यते ॥ १७ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन पुनः जो मनुष्य आत्माविषे प्रीतिवाला ही होवै है तथा आत्माकरिकैही तृप्त होवै है तथा आत्माविषे ही संतुष्ट होवै है तिस पुरुषकूं किंचित्‌मात्रभी कार्य नहीं कर्तव्य होवै है ॥ १७ ॥

टीका । हे अर्जुन जो पुरुष इंद्रियाराम होवै है । सो विषयलंपट पुरुष स्रक्, चंदन, वनिता आदिक विषयोंकी प्राप्ति करिकैही रतिकूं अनुभव करै है । तथा सो पुरुष मनोहर अन्नपानादिक पदार्थोंकी प्राप्तिकरिकैही तृप्तिकूं अनुभव करै है । तथा सो इंद्रियाराम पुरुष सुवर्ण, पुत्र, पशु आदिक पदार्थोंकी प्राप्तिकरिकै तथा रोगादिकोंकी अप्राप्तिकरिकैही तुष्टिकूं अनुभव करै है । तिन पदार्थोंके अप्राप्त हुए तिन इंद्रियाराम रागी पुरुषोंविषे यथा-

क्रमतैं अरति, अतृप्ति, अतुष्टिही देखणेविषे आवै है। इहां रति, तृप्ति तुष्टि यह तीनों मनकी वृत्तिविशेष हैं। ते तीनों साक्षीरूप अनुभवकरिकै सिद्ध हैं। और जिस विद्वान् पुरुषकूं परमानंदस्वरूप परमात्मा देवकी प्राप्ति भई है। सो विद्वान् पुरुष द्वैतदर्शनके अभावतैं तथा विषयसुखोंविषे तुच्छबुद्धिवाला होणेतैं तिन विषयसुखोंकी इच्छा करता नहीं। यह वार्त्ता (यावानर्थ उदपाने) इस श्लोकविषे पूर्व कथन करि आये हैं। या कारणतैं सो ब्रह्मवेत्ता विद्वान् पुरुष आनंदस्वरूप आत्माविषेही रति करै है। स्त्री आदिक विषयोंविषे रति करै नहीं। शंका। हे भगवन् आनंदस्वरूप आत्माविषे तौ सर्व प्राणीमात्रकी निरुपाधिक प्रीति है। ता अपणे आत्माके वासतैही स्त्रीपुत्रादिकोंविषे प्रीति होवै है। यातैं ता आत्मरति विद्वान् पुरुषविषे अज्ञानी पुरुषोंतैं विलक्षणता सिद्ध होवै नहीं। ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् कहे हैं (आत्मतृप्तः इति) हे अर्जुन सो विद्वान् पुरुष परमानंदस्वरूप आत्माकरिकैही तृप्त होवै है। अज्ञानी पुरुषकी न्यांई सो विद्वान् पुरुष कोई मनोरम स्त्रीयोंकरिकै तथा मिष्ट अन्नकरिकै तृप्त होवै नहीं। शंका। हे भगवन् जिस पुरुषका जठराग्नि रोगादिकोंकरिकै मंद हुआ है। तथा धातुक्षय होइ गया है। सो पुरुष मिष्ट अन्नकरिकै तृप्त होवै नहीं। तथा मनोरम स्त्रीयोंविषेभी रमण करता नहीं। यातैं तिस रोगी पुरुषतैं ता विद्वान् पुरुषविषे विलक्षणता सिद्ध नहीं होवैगी। ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् कहे हैं (आत्मन्येव च संतुष्टः इति) हे अर्जुन सो विद्वान् पुरुष केवल आनंदस्वरूप आत्माविषेही संतोषकूं प्राप्त हुआ है। दूसरे किसी अनात्म पदार्थोंविषे सो विद्वान् पुरुष संतोषकूं प्राप्त होवै नहीं। और रोगादिकोंकरिकै जिस पुरुषका जठराग्नि मंद हुआ है तथा धातुक्षय हुआ है। सो पुरुष तौ ता जठराग्निके प्रज्वलित करणेवासतै तथा धातुकी वृद्धि करणेवासतै नाना प्रकारके औषधोंके अर्थ जहां तहां भ्रमण करै है। आनंदस्वरूप आत्माविषे सो अज्ञानी पुरुष संतोषकूं प्राप्त होवै नहीं इति। इसी विलक्षणताके बोधन करणेवासतै श्रीभगवान्नैं (यस्त्वात्मरतिः) या वचनविषे तु यह शब्द कथन करा है। तहां श्रुति। " आत्मक्रीड आत्मरतिः क्रियावानेष ब्रह्मविदां वरिष्ठः"। अर्थ यह। ब्रह्मवेत्तावोंविषे श्रेष्ठ यह विद्वान् पुरुष आनंदस्वरूप आत्माविषेही क्रीडा करै है। तथा ता आत्माविषेही रति करै है। तथा ता आत्माविषेही क्रियावान् होवै है इति। ऐसे ब्रह्मवेत्ता विद्वान् पुरुषविषे कर्मोंके अधिकारीपणेका कोई हेतु है नहीं। या कारणतैं ता विद्वान् पुरुषकूं कोईभी लौकिक, वैदिक, कार्य कर्त्तव्य नहीं हैं। किंतु सो ब्रह्मवेत्ता पुरुष कृतकृत्यही है। इहां (मानवः) या पदकरिकै श्रीभगवान्नैं यह अर्थ सूचन करा। जो कोईभी मनुष्यमात्र इस प्रकार आत्मरति होवै है तथा आत्मतृप्त होवै है तथा आत्मसंतुष्ट होवै है। सोईही मनुष्य कृतकृत्यभावकूं प्राप्त होवै है। ता कृतकृत्यभावकी प्राप्ति-

विषे ब्राह्मणत्व आदिक उत्तम जातिका किंचित्मात्रभी उपयोग नहीं है इति ॥ १७ ॥ ❀ ॥ शंका । हे भगवन् आत्मसाक्षात्कारवान् पुरुषकूं भी स्वर्गादिक सुखोंकी प्राप्तिवासतै अथवा मोक्षकी प्राप्तिवासतै अथवा प्रत्यवायकी निवृत्तिवासतै अवश्यकरिकै ते कर्म करणे योग्य हैं ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् उत्तर कहे हैं ।

(मू. श्लो.) नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन । न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥ १८ ॥ (पदच्छेदः) न । एव । तस्य । कृतेन । अर्थः । न । अकृतेन । इह । कश्चन । न । च । अस्य । सर्वभूतेषु । कश्चित् । अर्थव्यपाश्रयः ॥ १८ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन तिस विद्वान् पुरुषकूं कर्मकरिकै कोईभी प्रयोजन नहीं है तथा कर्मके न करणेकरिकै इस लोकविषे कोईभी अर्थ नहीं है जिस कारणतैं इस विद्वान् पुरुषकूं सर्व भूतोंविषे कोईभी प्रयोजनका संबंध नहीं है ॥ १८ ॥

टीका । हे अर्जुन जो पुरुष आत्मरति है तथा आत्मतृप्त है तथा आत्मसंतुष्ट है । तिस आत्मवेत्ता पुरुषकूं नित्यनैमित्तिक कर्मोंकरिकै कोईभी अभ्युदयरूप प्रयोजन तथा निःश्रेयसरूप प्रयोजन है नहीं । काहेतैं तिस विद्वान् पुरुषकूं स्वर्गादिरूप अभ्युदयके प्राप्तिकी तौ इच्छामात्रभी नहीं है। और मोक्षरूप निःश्रेयस तौ कर्मोंकरिकै साध्यही नहीं है । तहां श्रुति । “ परीक्ष्य लोकान्कर्मचितान्ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन इति ” । अर्थ यह । यह अधिकारी ब्राह्मण पुण्यकर्मकरिकै रचित स्वर्गादिक लोकोंकूं अनित्यता सातिशयता आदिक दोषोंवाला जाणिकै तिन स्वर्गादिक लोकोंतैं वैराग्यकूं प्राप्त होवै । जिस कारणतैं आत्मारूप नित्यमोक्ष नित्यनैमित्तिक कर्मोंकरिकै प्राप्त होवै नहीं इति । इहां (नैव तस्य) या वचनविषे स्थित जो एव यह शब्द है । सो एवशब्द ता आत्मरूप नित्यमोक्षविषे ज्ञानसाध्यताकीभी निवृत्ति सूचन करे है । अर्थात् सो आत्मरूप नित्यमोक्ष जैसे कर्मोंकरिकै साध्य नहीं है तैसे ज्ञानकरिकैभी साध्य नहीं है । काहेतैं सो आत्मरूप मोक्ष वास्तवतैं तौ या जीवोंकूं नित्यही प्राप्त है । तथापि ता आत्माका जो अज्ञान है सो अज्ञानही ता मोक्षकी अप्राप्ति है । सो अज्ञान तत्त्वज्ञानमात्रकरिकै निवृत्त होवै है। ता तत्त्वज्ञानकरिकै अज्ञानके निवृत्त हुए ता विद्वान् पुरुषकूं कर्मोंकरिकै सिद्ध होणेहारा तथा तत्त्वज्ञानकरिकै सिद्ध होणेहारा कोईभी प्रयोजन बाकी रहै नहीं इति । शंका । हे भगवन् नित्यनैमित्तिक कर्मोंके नहीं करणेतैं शास्त्रविषे प्रत्यवायकी प्राप्ति कथन करी है । यातैं ता विद्वान् पुरुषनैंभी प्रत्यवायकी निवृत्ति करणेवासतै ते नित्यनैमित्तिक कर्म अवश्य क-

रणे योग्य हैं । ऐसी अर्जुनकी शंकाके हुए श्रीभगवान् कहे हैं (नाकृतेनेह कश्चन इति) हे अर्जुन तिस ब्रह्मवेत्ता विद्वान् पुरुषकूं नित्यनैमित्तिक कर्मोंके न करणेकरिकै इस लोकविषे किंचित्मात्रभी निंदारूप अनर्थ तथा प्रत्यवायकी प्राप्तिरूप अनर्थ होवै नहीं इति । तहां इस श्लोकके पूर्वार्द्धकरिकै कथन करे हुए सर्व अर्थविषे (न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः) या उत्तरार्द्धकरिकै युक्तिका कथन करै हैं । हे अर्जुन जिस कारणतैं इस ब्रह्मवेत्ता पुरुषकूं ब्रह्मातैं आदिलैके स्थावरपर्यंत सर्व भूतोंविषे कोईभी प्रयोजनका संबंध नहीं है । अर्थात् किसीभी भूतविशेषकूं आश्रयण करिकै कोई क्रिया साध्य अर्थ है नहीं । तिस कारणतैं इस ब्रह्मवेत्ता विद्वान् पुरुषकूं तिन नित्यनैमित्तिक कर्मोंका करणा तथा तिन कर्मोंका नहीं करणा यह दोनों निःप्रयोजन हैं । तहां श्रुति । " नैनं कृताऽकृते तपतः इति " । अर्थ यह । इस ब्रह्मवेत्ता विद्वान् पुरुषकूं कर्मोंका करणा तथा कर्मोंका नहीं करणा यह दोनों तपायमान करैं नहीं इति । शंका । हे भगवन् तिस ब्रह्मवेत्ता विद्वान् पुरुषकूंभी मोक्षकी प्राप्तिविषे इंद्रादिक देवता नाना प्रकारके विघ्न करैंगे । यातैं तिन विघ्नोंकी निवृत्ति करणेवासतै ता ब्रह्मवेत्ता पुरुषनैंभी तिन देवतावोंका आराधनरूप कर्म अवश्य करना चाहिये । समाधान । हे अर्जुन आत्मज्ञानतैं पूर्वही ते देवता विघ्न करैं हैं । आत्मज्ञानकी प्राप्तितैं उत्तर मोक्षकी प्राप्तिविषे ते देवता विघ्न करणेविषे समर्थ होवैं नहीं । तहां श्रुति । " तस्य ह न देवाश्च नाभूत्या ईशत आत्मा ह्येषां स भवति " । अर्थ यह । जिस कारणतैं सो ब्रह्मवेत्ता पुरुष इन देवतावोंका आत्मारूप है । तिस कारणतैं यह इंद्रादिक देवता तिस ब्रह्मवेत्ता पुरुषके पराभव करणेविषे समर्थ होवैं नहीं इति । यातैं ता ब्रह्मवेत्ता पुरुषकूं विघ्नोंकी निवृत्ति करणेवासतै सो देवतावोंका आराधनरूप कर्मभी कर्त्तव्य नहीं है इति । ऐसा ब्रह्मवेत्ता पुरुष सप्त भूमिकावोंके भेदकरिकै वसिष्ठभगवान्नैंभी निरूपण करा है । तहां श्लोक । " ज्ञानभूमिः शुभेच्छाख्या प्रथमा परिकीर्तिता । विचारणा द्वितीया स्यात्तृतीया तनुमानसा । सत्त्वापत्तिश्चतुर्थी स्यात्ततोऽसंसक्तिनामिका । पदार्थाभावनी षष्ठी सप्तमी तुर्यगा स्मृता " । अर्थ यह । शुभइच्छा १, विचारणा २, तनुमानसा ३, सत्त्वापत्ति ४, असंसक्ति ५, पदार्थाभावनी ६ और तुरीया ७ यह भूमिका ज्ञानकी होवै हैं । तहां नित्यअनित्यवस्तुका विचार तथा इस लोक परलोकके विषयसुखोंतैं वैराग्य तथा शमदमादिक षट्संपत्ति या तीनों साधनपूर्वक जो फलपर्यंत मोक्षकी इच्छा है जिसकूं मुमुक्षुता कहे हैं ताका नाम शुभइच्छा है ॥ १ ॥ तिसतैं अनंतर श्रोत्रिय ब्रह्मवेत्ता गुरुके समीप जाइकै वेदांतवचनोंका श्रवण करणा तथा श्रवण करे हुए अर्थका मनन करणा याका नाम विचारणा है ॥ २ ॥ तिसतैं अनंतर निदिध्यासनरूप अभ्यासतैं मनकी एकाग्रता करिकै ता मनविषे जो सूक्ष्म वस्तुके ग्रहण करणेकी योग्यता है याका नाम तनुमानसा है ॥ ३ ॥ यह तीनों भूमिका ज्ञानके

प्राप्तिका साधनरूप हैं। और या तीनों भूमिकावोंविषे यह सर्व जगत् भेदकरिकै विशिष्ट हुआ प्रतीत होवै है। यातैं यह तीनों भूमिका जाग्रत् अवस्था या नामकरिकै कही जावै हैं। यह वार्त्ताभी वसिष्ठभगवान्नैं कथन करी है। तहां श्लोक। "भूमिकात्रितयं त्वेतत् राम जाग्रदिति स्थितं। यथावद्भेदबुद्ध्येदं जगज्जाग्रति दृश्यते"। अर्थ यह। हे रामचंद्र जैसे जाग्रत् अवस्थाविषे यह जगत् यथावत् भेदबुद्धिकरिकै देख्या जावै है। तैसे या तीन भूमिकावोंविषेभी यह सर्व जगत् यथावत् भेदबुद्धिकरिकै देख्या जावै है। यातैं शुभइच्छा, विचारणा, तनुमानसा यह तीनों भूमिका जाग्रत् अवस्था या नामकरिकै कही जावै हैं इति। तिसतैं अनंतर या अधिकारी पुरुषकूं 'तत्त्वमसि' आदिक वेदांतवाक्योंतैं निर्विकल्पक ब्रह्मात्मैक्यविषयक साक्षात्कार होवै है याका नाम सत्त्वापत्ति है॥ ४॥ और ता सत्त्वापत्ति नामा चतुर्थ भूमिकाविषे यह सर्व जगत् स्वप्नकी न्यांई मिथ्यारूपकरिकै प्रतीत होवै है। या कारणतैं सा फलरूप सत्त्वापत्ति स्वप्न अवस्था या नामकरिकै कही जावै है। यह वार्त्ताभी वसिष्ठ भगवान्नैं कथन करी है। तहां श्लोक। "अद्वैते स्थैर्यमायाते द्वैते प्रशममागते। पश्यति स्वप्नवल्लोकं चतुर्थी भूमिका मता"। अर्थ यह। जिस कालविषे अद्वैतकी स्थिरता प्राप्त होवै है तथा द्वैतकी निवृत्ति होवै है तथा यह विद्वान् पुरुष सर्व जगतकूं स्वप्नकी न्यांई मिथ्या देखै है। तिस कालविषे चतुर्थी भूमिका कही जावै है इति। ता चतुर्थी भूमिकाकूं प्राप्त हुआ योगी पुरुष ब्रह्मवित् या नामकरिकै कह्या जावै है। और पंचमी, षष्ठी, सप्तमी यह तीन भूमिका तौ जीवन्मुक्तिकेही अवांतर भेद हैं। तहां सविकल्पक समाधिके अभ्यासकरिकै निरुद्ध हुआ जो मन है ता निरुद्ध मनविषे जो निर्विकल्पक समाधि अवस्था है ताका नाम असंसक्ति है॥ ५॥ ता असंसक्ति नामा पंचमी भूमिकाकूं सुषुप्ति या नामकरिकै कथन करे हैं। और ता पंचमी भूमिकावाला योगी पुरुष आपही समाधितैं व्युत्थानकूं प्राप्त होवै है। यातैं सो पंचमी भूमिकावाला योगी पुरुष ब्रह्मविद्वर या नामकरिकै कह्या जावै है। तिसतैं अनंतर ता असंसक्ति नामा पंचमी भूमिकाके परिपक्वताकरिकै चिरकालपर्यंत स्थिर हुई जो सा निर्विकल्पक समाधि अवस्था है ताका नाम पदार्थाभावनी है॥ ६॥ सा पदार्थाभावनी नामा षष्ठी भूमिका गाढ सुषुप्ति या नामकरिकै कही जावै है। ता पदार्थाभावनी नामा षष्ठी भूमिकाकूं प्राप्त हुआ सो योगी पुरुष आपही समाधितैं उठै नहीं। किंतु दूसरे शिष्यादिकोंके प्रयत्नकरिकैही सो योगी पुरुष समाधितैं व्युत्थानकूं प्राप्त होवै है। सो षष्ठी भूमिकावाला योगी पुरुष ब्रह्मविद्वरीयान् या नामकरिकै कह्या जावै है। यह वार्त्ताभी वसिष्ठभगवान्नैं कथन करी है। तहां श्लोक। "पंचमीं भूमिकामेत्य सुषुप्ति पदनामिकां। षष्ठीं गाढसुषुप्त्याख्यां क्रमात्पतति भूमिकां"। अर्थ यह। यह योगी पुरुष सुषुप्ति नामा पंचमी भूमिकाकूं प्राप्त होइकै क्रमतैं गाढ सुषुप्ति नामा षष्ठी भूमिकाकूं प्राप्त होवै है इति। और

जिस समाधि अवस्थातैं यह योगी पुरुष आपभी व्युत्थानकूं प्राप्त होवै नहीं। तथा अन्य शिष्यादिकोंकरिकैभी व्युत्थानकूं प्राप्त होवै नहीं। किंतु सर्वथा भेददर्शनके अभावतैं तद्रूपही होवै है। तथा अपणे प्रयत्नतैं विनाही परमेश्वरकरिकै प्रेरणा करे हुए प्राणवायुके वशतैं तथा प्रारब्धकर्मके वशतैं जिस विद्वान् पुरुषके देहका व्यवहार अन्य लोकही सिद्ध करै हैं। तथा जो विद्वान् पुरुष सर्वदा परिपूर्ण परमानंदघन हुआ स्थित होवै है। ऐसी अवस्था तुरीया नामा सप्तमी भूमिका कही जावै है ॥ ७ ॥ ता सप्तमी भूमिकाकूं प्राप्त हुआ सो योगी पुरुष ब्रह्मविद्वरिष्ठ या नामकरिकै कह्या जावै है। इन सप्त भूमिकावोंके संग्रहका यह श्लोक है। "चतुर्थी भूमिका ज्ञानं तिस्रः स्युः साधनं पुरा। जीवन्मुक्तेरवस्थास्तु पराःस्तिस्रः प्रकीर्तिताः"। अर्थ यह। शुभइच्छा, विचारणा, तनुमानसा यह पूर्वली तीन भूमिका तौ साधनरूप हैं। और सत्त्वापत्ति नामा चतुर्थी भूमिका ज्ञानरूप है। और असंसक्ति, पदार्थाभावनी, तुरीया यह तीन भूमिका जीवन्मुक्तिकी अवस्थाविशेष हैं इति। इन सप्त भूमिकावोंके कहणेका इहां प्रसंगविषे यह प्रयोजन है। जो पुरुष शुभइच्छा, विचारणा, तनुमानसा या साधनरूप प्रथम तीन भूमिकावोंकूंभी प्राप्त भया है। सो पुरुषभी जबी कर्मोंका अधिकारी नहीं है। तबी चतुर्थी भूमिकावाला ज्ञानवान् पुरुष तथा उत्तर तीन भूमिकावाला जीवन्मुक्त पुरुष तिन कर्मोंका अधिकारी नहीं है याकेविषे क्या कहणा है इति ॥ १८ ॥ ❀ ॥ जिस कारणतैं तूं अर्जुन इस प्रकारका ज्ञानवान् है नहीं। किंतु केवल कर्मोंकाही तूं अधिकारी है। तिस कारणतैं फलकी इच्छातैं रहित होइकै तूं नित्यनैमित्तिक कर्मोंकूंही कर या प्रकारके अर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनके प्रति कथन करै हैं।

(मू.श्लो.) तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर। असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥ १९ ॥ (पदच्छेदः) तस्मात्। असक्तः। सततं। कार्यं। कर्म। समाचर। असक्तः। हि। आचरन्। कर्म। परं। आप्नोति। पूरुषः ॥ १९ ॥ (पदार्थः) हे अर्जुन तिस कारणतैं तूं फलकामनातैं रहित होइकै सर्वदा अवश्य करणेयोग्य नित्यनैमित्तिक कर्मकूं भली प्रकारतैं कर जिस कारणतैं यह पुरुष फलकी कामनातैं रहित होइकै तिस कर्मकूं करता हुआ मोक्षकूंही प्राप्त होवै है ॥ १९ ॥

॥१४॥

टीका। हे अर्जुन जिस कारणतैं तूं ज्ञानवान् है नहीं। किंतु केवल कर्मोंकाही अधिकारी है। तिस कारणतैं "यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात" इत्या-

दिक श्रुतियोंनें विधानकरयेहूए तथा (तमेतंवेदानुवचनेनब्राह्मणाविविदिषंतियज्ञेनदानेनतपसानाशकेन) इस श्रुति नैं आत्मज्ञानविषे उपयोग कथनकरयाहै जिनोका ऐसेजे नित्यनैमित्तिक कर्महैं ॥ तिनकर्मोंकूं तूं फलकीइच्छातैंरहितहोइकै श्रद्धाभक्तिपूर्वक निरंतरकर ॥ जिसकारणतैं यह पुरुष फलकीइच्छातैरहितहोइकै निरंतर तिन नित्यनैमित्तिककर्मोंकूं करताहूआ अंतःकरणकीशुद्धिद्वारा तथाआत्मज्ञानद्वारा मोक्षकूंहींप्राप्तहोवैहै इति ॥ १९ ॥ ॥ शंका ॥ हेभगवन् ज्ञानकेप्राप्तिकीइच्छावान्‌पुरुषकूंभी ताज्ञाननिष्ठाकीप्राप्तिवासतै श्रवणमनननिदिध्यासनकेअनुष्ठानअर्थ सर्वकर्मोंकात्यागरूपसंन्यास शास्त्रविषे विधानकरयाहै ॥ यातैं केवल ज्ञानवान्‌पुरुषकूंहीं तिनकर्मोंका अनधिकारनहींहै ॥ किंतु ताज्ञानकेप्राप्तिकीइच्छावान्‌विरक्तपुरुषकूंभी तिनकर्मोंकाअनधिकारहीहै ॥ यातैं ज्ञानकेप्राप्तिकीइच्छावान् तथा विरक्त ऐसाजो मैं अर्जुनहूं ॥ तिस मैं अर्जुननेभी तेकर्म परित्यागकरणेकूंहीयोग्यहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकूं श्रीभगवान् क्षत्रियराजाकूं संन्यासका अनधिकार प्रतिपादनकरिकै निवृत्तकरेहैं ॥

(मू. श्लो.) कर्मणैवहिसंसिद्धिमास्थिताजनकादयः ॥ लोकसंग्रहमेवापिसंपश्यन्कर्तुमर्हसि ॥ २० ॥ कर्मणा । एव । हि । संसिद्धिम् । आस्थिताः । जनकादयः । लोकसंग्रहम् । एव । अपि । संपश्यन् । कर्तुम् । अर्हसि ॥ इतिपद० ॥ हेअर्जुन जिसकारणतैं पूर्व जनकादिकक्षत्रियराजे कर्मकरिकै हीं ज्ञाननिष्ठाकूं प्राप्तहोतेभयेहैं तिसकारणतैं तूभी कर्महीकरणेकूंयोग्यहैं किंवा लोकसंग्रहकूं देखताहूआ भी तूं कर्मकरणेकूं हीं योग्यहैं ॥ २० ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन श्रुतिस्मृतिविषे प्रसिद्धजे जनकराजा अजातशत्रुराजा अश्वपतिराजा भगीरथराजा इत्यादिकक्षत्रियराजेहैं ॥ ते जनकादिक विद्वान्‌राजेभी नित्यनैमित्तिककर्मोंकरिकैही अंतःकरणकीशुद्धिद्वारा श्रवणमननादिकों करिकै साध्य ज्ञाननिष्ठाकूं प्राप्तहोतेभयेहैं ॥ कोईककर्मोंकेत्यागकरिकै ताज्ञाननिष्ठाकूं नहींप्राप्त होतेभयेहैं ॥ यहवार्ताजिसकारणतै यथार्थहै ॥ तिसकारणतै तूंक्षत्रियअर्जुनभी ज्ञानकीइच्छावालाहूआ अथवा विद्वान्‌हूआ सर्वप्रकारतैकर्महींकरणेकूंयोग्यहैं ॥ कर्मोंकेत्यागकरणेकूं तू योग्यनहींहै ॥ काहेतें (ब्राह्मणाःपुत्रैषणायाश्च वित्तैषणायाश्च लोकैषणायाश्चव्युत्थायाथ भिक्षाचर्यंचरंति) यह जो संन्यासआश्रमकाविधायकश्रुतिवचनहै ॥ तावचनविषे ब्राह्मणकाहीं संन्यासविषेअधिकार कथनकऱ्याहै ॥ क्षत्रियवैश्यकाअधिकार कथनकऱ्यानहीं ॥ जैसे (स्वाराज्यकामोराजाराजसूयेनयजेत) इसवचनविषे राजसूययज्ञविषे क्षत्रियराजाकाहीअधिकार कथनकरयाहै ॥ ब्राह्मणादिकोंकाअधिकार कथनकरया नहीं ॥ और (चत्वारआश्रमाब्राह्मणस्यत्रयोराजन्यस्यद्वौवैश्यस्य) अर्थ—यह ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ सं

न्यास यह च्यारि आश्रम ब्राह्मणकेहींहोवैहैं ॥ और संन्यासकूंछोडिकै तीन आश्रम क्षत्रियराजाकेहोवैहैं ॥ और ब्रह्मचर्य गृहस्थ यह दोआश्रम वैश्यकेहोवै हैं इति ॥ इत्यादिक अनेकश्रुतिस्मृतिवचनोंविषे क्षत्रियवैश्यकूं संन्यासकेअभावकाकथनकऱ्याहै ॥ तिनश्रुतिस्मृतिवचनोंकेतात्पर्यकूंजाणणेहारे ते जनकादिकक्षत्रियराजे नित्यनैमित्तिककर्मोंकरिकैहीं ज्ञाननिष्ठाकूंप्राप्तहोतेभयेहैं ॥ तिनकर्मोंकेत्यागरूपसंन्यासकरिके ते जनकादिक ज्ञाननिष्ठाकूं नहीं प्राप्तहोते भयेहैं इति ॥ किंवा ॥ (सर्वेराजाश्रिताधर्माराजाधर्मस्यधारकः) ॥ अर्थ यह श्रुतिस्मृतिकरिकैप्रतिपादितसर्वधर्म राजाकेआश्रितरहे हैं॥ तथा यहराजाहीं सर्वधर्म काधारणकरणेहाराहोवैहै इति ॥ यास्मृतिवचनतैं सर्ववर्णआश्रमकेधर्मोकाप्रवर्त्तकपणा क्षत्रियराजाविषेसिद्धहोवैहै ॥ याकारणतैंभी यहक्षत्रियराजा अवश्यकरिकै कर्मोकूंकरे ॥ याअर्थकूं श्रीभगवान् कहेहैं (लोकसंग्रहमेवापीति) लोकोंकूं आपणेआपणेधर्मविषे प्रवर्त्तकरणा तथा अधर्मतैंनिवृत्तकरणा याका नाम लोकसंग्रहहै॥ तालोकसंग्रहकूंदेखताहूआभी तथा पूर्वजनकादिकक्षत्रियराजावोंकेशिष्टाचारकूं देखताहूआभी तूं अर्जुन नित्यनैमित्तिककर्मोंकेकरणेकूंहीयोग्यहै ॥ तात्पर्य यह ॥ क्षत्रियजन्मकीप्राप्तिकरणेहारेकर्मोंनैं आरंभकऱ्याहै शरीरजिसका ऐसाजो तूअर्जुनहैं ॥ सो तूं अर्जुन विद्वान्हूआभी जनकादिकोंकीन्यांई प्रारब्धकर्म के बलकरिकै तालोकसंग्रहकेवासते कर्मकरणेकूंहींयोग्यहैं ॥ कोईकर्मोकेत्यागकरणेकेयोग्य तूं नहींहै ॥ जिसकारणतैं कर्मोकेसंन्यासकरणेयोग्यब्राह्मणशरीर तुमा रेकूंप्राप्तभयानहीं इति ॥ इसीप्रकारके श्रीभगवान्के अभिप्रायकूं जानणेहारे भगवान्भाष्यकारोंनेंब्राह्मणकूंहीं संन्यासविषेअधिकारहै अन्यक्षत्रियादिकोंकूं संन्या सविषेअधिकारनहींहै याप्रकारकानिर्णयकरयाहै ॥ और (सर्वाधिकारविच्छेदिज्ञानंचेदभ्युपेयते ॥ कुतोऽधिकारनियमोव्युत्थानेक्रियतेबलात्) अर्थ यह ॥ सर्व अधिकारका विच्छेदकरणेहाराज्ञान जबी क्षत्रियवैश्यकूं अंगीकारकरतेहो ॥ तबी संन्यासविषे ब्राह्मणकाहींअधिकारहै क्षत्रियवैश्यका नहींहै याप्रकारका संन्यासकेअधिकारकानियम बलात्कारसैं किसवासतै अंगीकार करतेहो ॥ किंतु यह नियमभी नहीं मान्याचाहियेइति ॥ इत्यादिकवचनोंकरिकै जोवार्त्तिक कारनैं क्षत्रियवैश्यकूंभी संन्यासका अधिकार सिद्धकरयाहै ॥ सोप्रौढिवादतैं सिद्धकऱ्याहै ॥ सर्वथाअनुपपन्नअर्थकूंभी आपणीप्रज्ञाके बलतैं सिद्धकरदेणा या कानाम प्रौढिवादहै ॥ अथवा क्षत्रियवैश्यकूं संन्यासकाप्रतिपादनकरणेहारेवचनोंका भरतऋषभादिकोंकीन्यांई अलिंगविद्वत्संन्यासविषे तात्पर्यहै इति ॥ सर्व प्रकारतैं दंडादिकचिह्नपूर्वक विविदिषासंन्यासविषै एकब्राह्मणकाहीं अधिकार है ॥ क्षत्रियादिकोंकाहैनहीं इति ॥ २० ॥ शंका ॥ हेभगवन् जोकदाचित् मैं अर्जून तिनकर्मोकूंकरौंभी ॥ तौंभी दूसरेलोक तिनकर्मोंकूं किसप्रकारकरैंगे ॥ ऐसी अर्जुनकीशंकाकेहूए ॥ श्रीभगवान् दूसरे लोक श्रेष्ठपुरुषोंकेआचारके अनुसारहीं प्रवृत्तहोवैहैं याप्रकारकाउत्तर कहेहैं ॥

(मू० श्लो०) यद्यदाचरतिश्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः ॥ सयत्प्रमाणंकुरुतेलोकस्तदनुवर्त्तते ॥ २१ ॥ यत् । यत् । आचरति । श्रेष्ठः । तत् । तत् । एव । इतरः । जनः । सः । यत् । प्रमाणं । कुरुते । लोकः । तत् । अनुवर्त्तते ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन श्रेष्ठपुरुष जिसे जिसकर्मकूं करेहैं तिसी तिसीकर्मकूं हीं दूसरे जनभी करेहै और सोश्रेष्ठपुरुष जिसकूं प्रमाण करेहैं तिसकूंहीं दूसरेलोक भी प्रमाणकरेहैं ॥ २१ ॥ (इतिपदार्थः)

टीका ॥ हेअर्जुन सर्वलोकोंविषेप्रधानभूत जेराजादिकश्रेष्ठपुरुषहैं ॥ तेराजादिकश्रेष्ठपुरुष जिसजिस शुभकर्मकूं अथवा अशुभकर्मकूं करेहैं ॥ तिसी तिसी शुभकर्मकूं अथवा अशुभकर्मकूं तिनराजादिकोंकेआज्ञाविषेचलणेहारेदूसरेजनभी करेहैं ॥ तिनराजादिकोंतैंस्वतंत्रहोइकै तेदूसरेजन किंचित्मात्रभीकार्यकूं करेनहीं ॥ ॥ शंका ॥ हेभगवन् तेदूसरेलोक शास्त्रकूंभलीप्रकारतैंविचारकरिकै शास्त्रतैंविरुद्ध राजादिकश्रेष्ठपुरुषोंकेआचारकूंपरित्यागकरिकै केवलशास्त्रविहितआचारकूं किसवासतैनहींकरते ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहूए ॥ तिनदूसरेलोगोंकूं श्रेष्ठाचारकीन्यांई प्रमाणताकानिश्चयभी तिनश्रेष्ठपुरुषोंकेअनुसारहींहोवैहै याप्रकारकाउत्तर श्रीभगवान् कथनकरेहैं (सयत्प्रमाणंकुरुतेइति) हेअर्जुन तेराजादिकश्रेष्ठपुरुष जिसलौकिकपदार्थकूं अथवा वैदिकपदार्थकूंप्रमाणरूपकरिकै अंगीकारकरेहैं ॥ तिसीहीं लौकिकपदार्थकूं तथा वैदिकपदार्थकूं दूसरेलोकभी प्रमाणरूपकरिकै अंगीकारकरेहैं ॥ तेदूसरेलोक तिनराजादिकश्रेष्ठपुरुषोंतैं स्वतंत्रहोईकै किसीभीपदार्थकूं प्रमाणरूपकरिकैअंगीकाकरतेनहीं ॥ यातैं हेअर्जुन सर्वलोकोंविषे प्रधानभूतजोतूंराजाहैं ॥ तिसतुमनैं लोकोंकेसंरक्षणवासतैं अवश्यकरिकै कर्म करणेकूं योग्यहैं ॥ तुमारीशुभकर्मविषेप्रवृत्तिकूं देखिकरिकै दूसरेलोकभी अवश्यकरिकै तिनशुभकर्मोंविषे प्रवृत्तहोवैंगे ॥ जिसकारणतै राजादिकप्रधानपुरुषोंकेअनुसारहीं दूसरेसर्वलोकोकेव्यवहादहोवेहैं इते ॥ २१ ॥ ❁ ॥ हे अर्जुन दूसरेलोकोंकूं शुभकर्मविषे प्रवृत्तकरणेवासतै राजादिकश्रेष्ठपुरुषोंनें अवश्यकरिकै शुभकर्मोंविषेप्रवृत्तहोणा याअर्थविषे मैंकृष्णभगवान्हीं दृष्टांतहूं इसअर्थकूं तीनश्लोकोंकरिकै श्रीभगवान् कहेहैं ॥

(मू० श्लो०) नमेपार्थास्तिकर्तव्यंत्रिषुलोकेषुकिंचन ॥ नानवाप्तमवाप्तव्यंवर्त्तएवचकर्मणि ॥ २२ ॥ न । मे । पार्थ । अस्ति । कर्त्तव्यं । त्रिषु । लोकेषु । किंचन । न । अनवाप्तं । अवाप्तव्यम् । वर्ते । एव । च । कर्मणि ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन हमारेकूं तीन लोकोंविषे किंचित् मात्रभी करणेयोग्य नहीं हैं जिसकारणतैं हमारेकूं पूर्वअप्राप्तफल किंचित्मात्रभी प्राप्तहोणेयोग्य नहींहै तौभी मै कर्मविषे प्रसिद्ध वर्त्तता हींहूं ॥ २२ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ जैसे गृहकेस्वामीकूं तागृहविषेस्थितसर्वपदार्थ प्राप्तहींहैं ॥ तैसे सर्वब्रह्मांडकास्वामी जोमैं कृष्णभगवान्हूं तिसहमारेकूं ताब्रह्मांडविषेस्थितसर्वपदार्थ प्राप्तहींहैं ॥ कोईभीपदार्थ हमारेकूं अप्राप्तनहींहै॥ और लोकविषेपूर्वअप्राप्तवस्तुकीप्राप्तिवासतैहीं प्रयत्नकरेहैं॥पूर्वप्राप्तवस्तुकीप्राप्ति वासतै कोईभी प्रयत्नकरतानहीं॥ यातैं तीन लोकोंविषे किसीपदार्थकेप्राप्तिकाउद्देशकरिकै हमारेकूं किंचित्मात्रभी कर्त्तव्यनहींहै ॥ तौभी मैंकृष्णभगवान् वेदविहितशुभकर्मोविषे प्रवृत्तहोताहींहूं ॥ तिनशुभकर्मोका मैं कदाचित्भी परित्यागकरतानहीं ॥ तिनशुभकर्मोविषेहमारीप्रवृत्ति तुमारेकूंभी प्रत्यक्षहींसिद्धहै ॥ इसीप्रसिद्धिकेबोधनकरणेवासतै श्रीभगवान्नैं (वर्त्तएवच) यावचनविषेस्थित च यहशब्दकथनकरयाहै ॥ और (हेपार्थ) यासंबोधनकरिकै श्रीभगवान्नैं यहअर्थसूचनकरया ॥ शुद्धक्षात्रियवंशविषेउत्पन्न होणेतैं तूं अर्जुन हमारेसमानही शूरवीरहैं ॥ यातैं हमारेन्यांई तुमारेकूंभी शुभकर्मोविषेप्रवृत्तहोणाहींउचितहै इति ॥ २२ ॥ ॥ शंका ॥ हेभगवन् आप शुभकर्मोविषेप्रवृत्तहोइकै दूसरेलोकोंकूंभी तिनशुभकर्मोविषे प्रवृत्तकरणा याप्रकारके लोकसंग्रहकरणेका कोईफलहैनहीं ॥ यातैं सोलोकोंकासंग्रहभी तुमारेकूंकरणे योग्यनहींहै ॥ ऐसी अर्जुनकीशंकाकेहूए श्रीभगवान् उत्तरकहेहैं ॥

(मू. श्लो.) यदिह्यहंनवर्त्तेयंजातुकर्मण्यतंद्रितः ॥ ममवर्त्मानुवर्त्ततेमनुष्याःपार्थसर्वशः ॥ २३ ॥ यदि । हि । अहं । न । वर्त्तेयं जातु । कर्मणि । अतंद्रितः । मम । वर्त्म । अनुवर्तते । मनुष्याः । पार्थ । सर्वशः ॥ इतिप० ॥ हेअर्जुन जो कदाचित् मैंकृष्णभगवान् अलसतैंरहितहोइकै शुभकर्मोविषे नहीं प्रवर्त्तहोवौं तौं कर्मकेअधिकारीमनुष्य हमारे मार्गकूंही सर्वप्रकारकरिकै अंगीकारकरैंगे ॥ २३ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन मैं अभीकृतार्थहूआहूं कर्मोकेकरणेकरिकै अभी हमारेकूं किंचित्मात्रभीअर्थ सिद्धकरणेयोग्यनहींरह्या याप्रकारकी कृतकृत्यबुद्धिकरिकै जोकदाचित् मैंकृष्णभगवान् आलसतैंरहितहोइकै शुभकर्मोविषेनहीं प्रवृत्तहोवौंगा ॥ तौं जितनैंकीकर्मोकेअधिकारीमनुष्यहैं तेसर्वमनुष्य हमारेकूं शुभकर्मोतैंरहितहूआ देखिकै आपभी शुभकर्मोतैं रहितहोवैंगे ॥ काहेतैं यहकृष्ण भगवान् सर्वज्ञहैं याप्रकारकी हमारेविषेसर्वज्ञत्वबुद्धि करिकै यहसर्व अधिकारीमनुष्य सर्वप्रकारतैं हमारेहींमार्गकूं अंगीकारकरेहैंइति ॥ २३ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हेभगवन् सर्वमनुष्योंविषेश्रेष्ठ जोआपहो तिस आपके शुभकर्मोकेत्यागरूपमार्गकूं अंगीकारकरणा इनअधिकारीमनुष्योंकूं उचितहींहैं ॥ ताकरिकै तिनअधिकारीमनुष्योंकूं कौनदोषहै ॥ ऐसी अर्जुनकीशंकाकेहूए श्रीभगवान् उत्तरकहेहैं ॥

(मू. श्लो.) उत्सीदेयुरिमेलोकानकुर्यांकर्मचेदहम् ॥ संकरस्यचकर्तास्यामुपहन्यामिमाःप्रजाः ॥ २४ ॥ उत्सीदेयुः । इमे ।

लोकाः । न । कुर्यां । कर्म । चेत् । अहं । संकरस्य । च । कर्त्ता । स्याम् । उपहन्याम् । इमाः । प्रजाः ॥ इतिपदच्छेदः ॥ हेअर्जुन जो कदाचित् मैंईश्वर शुभकर्मकूं नहीं करौंगा तौ यह सर्वलोक नाशकूंप्राप्तहोवैंगे तथा मैंहीं वर्णसंकरका कर्त्ता होवौंगा तथा इस सर्वप्रजाकूं मैंहीं हननकरौंगा ॥ २४ ॥ (इतिपदार्थः) ॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन सर्वकाईश्वर मैंकृष्ण भगवान् जोकदाचित् शास्त्रविहितशुभकर्मोंकूं नहींकरौंगा ॥ तौ हमारेअनुसारवर्त्तणेहारे मनुआदिक श्रेष्ठपुरुषभी तिन शुभकर्मोंविषेप्रवृत्तनहींहोवैंगेयातैं जलकीवृष्टिद्वारा सर्वलोकोंकेस्थितिकाकारणरूपजेयज्ञादिककर्महैं तिनसर्वकर्मोंकालोपहोवैंगा ॥ तिनसर्वकर्मोंकेलोपहूए यह सर्वलोक नाशकूंप्राप्त होवैंगे ॥ तिन सर्वलोकोंकेनाशतैं अनंतर जोवर्णसंकरहोनाहै तिसवर्णसंकरकाभीमैंहीं करणेहाराहोवौंगा ॥ तिसकरकें मैंहींइससर्वप्रजाकूं हननकरणेहाराहोवौंगा ॥ सोयहवार्त्ता हमारेकूंअत्यंतअनुचितहै ॥ काहेतैं सर्वप्रजाकेअनुग्रहकरणेवासतै प्रवृत्तहूआ जोमैं कृष्णभगवान्हूं तिसहमारेकूं धर्मकालोपकरिकै सर्वप्रजाकाहननकरणा उचितनहींहै इति ॥ अथवा (यद्यदाचरतिश्रेष्ठः) इत्यादिकच्यारिश्लोकोंका यह दूसरा अर्थकरना ॥ हेअर्जुन केवललोकसंग्रहकूं देखताहुआही तूं कर्मकरणेकूयोग्यनहींहैं ॥ किंतु श्रेष्ठाचारतैंभी तू कर्मकरणेकूंयोग्यहै ॥ इस अर्थकूं श्रीभगवान् कहेहैं (यद्यदाचरतिश्रेष्ठःइति) यातैसर्वप्राणियोंतेंश्रेष्ठ जौमैंकृष्णभगवानहूंतिसहमारा जिसप्रकारका आचारहै तिसीप्रकारका आचार हमारे अनुसारवर्त्तणेहारे तैं अर्जुननैंभी करणेयोग्यहै ॥ हमारेतैंस्वतंत्रहोईकै किंचित्मात्रभीआचारतुमारेकूं करणेयोग्यनहींहैं ॥ शंका ॥ हेभगवन् सो आपकाआचार किसप्रकारकाहैजो आचार हमारेकूं अवश्यकरिकै अंगीकारकरणेकूंयोग्यहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान् (नमेपार्थास्तिकर्त्तव्यम्) इत्यादिकतीनश्लोकोंकरिकै ताआपणेआचारका कथनकरताभया इति ॥ २४ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हेभगवन् आप ईश्वरहो ॥ यातैंलोकसंग्रहवास्तै शुभकर्मोंकूंकरतेहुएभीमैं सर्वदा अकर्त्ताहूं याप्रकारके कर्तृत्वअभिमानकेअभावतैं आपकी किंचित्मात्रभीहानिहोवैनहीं ॥ औरमैंअर्जुनतो जीवहूं ॥ यातैंलोकसंग्रहवास्तै तिनशुभकर्मोंकेकरणेतैं मैंकर्मोंकाकर्त्ताहूंयाप्रकारकेकर्तृत्वअभिमानकरिकैहमारेज्ञानका अभिभव अवश्यकरिकैहोवैगाऐसीअर्जुनकीशंकाकेहूए श्रीभगवान् उत्तरकहैहैं ॥

(मू. श्लो.) सक्ताः कर्मण्यविद्वांसोयथाकुर्वंतिभारत॥कुर्याद्विद्वांस्तथासक्ताश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्॥२८॥सक्ताः।कर्मणि।अविद्वांसः।यथा। कुर्वंति । भारत । कुर्यात् । विद्वान् । तथा । असक्तः । चिकीर्षुः । लोकसंग्रहम् ॥ इतिप० ॥ हेभारत जैसे अज्ञानीपुरुष कर्मविषे

अभिनिवेशवालेहूए तिसकर्मकूं करेहैं तैसे लोकसंग्रहके करणेकीइच्छावाला विद्वान्पुरुष अभिनिवेशतैंरहितहूआ ताकर्मकूं करै ॥ २५ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेभारत आत्मज्ञानतेरहितअज्ञानीपुरुष मैंकर्मोंकाकर्त्ताहूं याप्रकारकेकर्तृत्वअभिमानकरिकै तथास्वर्गादिकफलकीइच्छाकरिकै यज्ञादिककर्मोंविषे अभिनिवेशवालेहुए जिसप्रकार श्रद्धाभक्तिपूर्वक तिनयज्ञादिककर्मोंकूंकरेहैं ॥ तिसीप्रकार लोकसंग्रहकरणेकीइच्छावाला विद्वान्पुरुषभी श्रद्धाभक्तिपूर्वक तिन यज्ञादिककर्मोंकूंकरै ॥ परंतु सोविद्वान्पुरुष कर्तृत्वअभिमानतेरहितहुआ तथास्वर्गादिकफलकीइच्छातैंरहितहुवातिनशुभकर्मोंकूंकरै ॥ ईहां (हेभारत) यासंबोधनकरिकै श्रीभगवान्ने अर्जुनकेप्रति यहअर्थसूचनकऱ्या ॥ भरतवंशविषे जाकीउत्पत्तिहोवै ताकानाम भारतहै ॥ अथवा भानाम ज्ञानकाहै ताज्ञानविषे जोप्रीतिवालाहोवै ताकानाम भारतहै ॥ ऐसेभारतनामवाला तूअर्जुनहै ॥ यातैं अज्ञानीपुरुषकीन्याई विद्वान्पुरुषभी लोकसंग्रहवास्तै शुभकर्मोंकूंकरै याप्रकारका जोशास्त्रकाअर्थहै तिसअर्थकेधारणकरणेकूं तू योग्यहैं ॥ ताअर्थकेधारणकरणेतैंहीं तुमारेविषे सोभारतनाम सार्थकहोवेगा इति ॥ २५ ॥ ❀ ॥ शंका हे भगवन् विद्वान्पुरुषने शुभकर्मोंका अनुष्ठानकरिकैही लोकसंग्रहकरणा ॥ तत्त्वज्ञानकेउपदेशकरिकै सोलोकसंग्रह नहींकरणा याकेविषे कौनहेतुहै ॥ ऐसी अर्जुनकीशंकाकेहुए ॥ श्रीभगवान् उत्तरकहेहैं ॥

(मू.श्लो.) नबुद्धिभेदंजनयेदज्ञानांकर्मसंगिनाम् ॥ जोषयेत्सर्वकर्माणिविद्वान्युक्तःसमाचरन् ॥ २६ ॥ न । बुद्धिभेदं । जनयेत् । अज्ञानां । कर्मसंगिनां । जोषयेत् । सर्वकर्माणि । विद्वान् । युक्तः । समाचरन् ॥ २६ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन यहविद्वान्पुरुष कर्मकेसंगी । अविवेकीपुरुषोंके बुद्धिभेदकूं नहीं उत्पन्नकरे किंतु सोविद्वान्पुरुष आदरपूर्वक सर्वकर्मोंकूं करताहूआ तिन अविवेकी पुरुषोंकूंभी तिनकर्मोंविषेहीं जोडै ॥ २६ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन कर्तृत्वअभिमानकरिकै तथास्वर्गादिकफलकीइच्छाकरिकै यज्ञादिककर्मोंविषे अभिनिवेशवालेजेअज्ञानीपुरुषहैं ॥ तिनअज्ञानीपुरुषोंकी मैं इस कर्मकूंकरौंगा तथामैं इसफलकूंभोगौंगा याप्रकारकीजाबुद्धिहै ताबुद्धिकेभेदकूं यहविद्वान् पुरुष नहींउत्पन्नकरै ॥ अर्थात् तूंआत्मा अकर्त्ताहैं तथाअभोक्ताहैं याप्रकारकाउपदेशकरिकै तिनअज्ञानी पुरुषोंकेबुद्धिकूं तिनशुभकर्मोंतैं चलायमाननहींकरै ॥ किंतु लोकसंग्रहकरणेकीइच्छावाला सोविद्वान्पुरुष आपश्रद्धाभक्तिपूर्वक तिनशुभकर्मोंकूंकरताहुआ तिनअज्ञानीपुरुषोंकीभी तिनशुभकर्मोंविषेश्रद्धाउत्पन्नकरिकै तिनअज्ञानीपुरुषोंकूं तिनशुभकर्मोंविषेहींनिरंतरजोडै ॥ काहेतैं शास्त्रविहित

शुभकर्मोंकेअनुष्ठानतैं जिसपुरुषकाअंतःकरणशुद्धहुआहै ॥ सोपुरुषहीं अकर्त्ताआत्माकेउपदेशकाअधिकारीहोवैहै ॥ अशुद्धअंतःकरणवालापुरुष अकर्त्ताआत्मा केउपदेशका अधिकारीहोवैनहीं ॥ ऐसेअनधिकारीपुरुषोंकेप्रति अकर्त्ताआत्माकेउपदेशकरिकै तिनोंकेबुद्धिकुं शुभकर्मोतैंचलायमानकियेहुएतिनपुरुषोंकी शुभकर्मो विषे श्रद्धानिवृत्तहोइजावैहै ॥ यातैंतिनअज्ञानीपुरुषोंकूंस्वर्गादिकउत्तमलोकोंकीभी प्राप्तिहोवैनहीं ॥ तथाअशुद्धअंतःकरणविषे आत्माकाज्ञानभी उत्पन्नहोवैनहीं ॥ यातैं तेअज्ञानीपुरुष भोग मोक्षदोनोंतैभ्रष्टहोवै हैं ॥ यहवार्त्ता अन्यशास्त्रविषेभीकहीहै ॥ तहांश्लोक ॥ "अज्ञस्यार्द्धप्रबुद्धस्यसर्वंब्रह्मेतियोवदेत् ॥ महा निरयजालेषुसतेनविनियोजितः ॥" ॥अर्थ यह ॥ अंतःकरणकीशुद्धितैंरहित तथाविषयोंविषेआसक्त ऐसा जो केवलकर्मोकाअधिकारी अर्धप्रबुद्ध अज्ञानीपुरुषहै॥ तिसअज्ञानीपुरुषकेप्रति जोविद्वान्पुरुष तूं मैं यहसर्वजगत् ब्रह्मरूपहींहै याप्रकारकाउपदेशकरेहै ॥ तिसविद्वान्पुरुषने सोअज्ञानीपुरुष महारौरवनरकादिकोंविषे प्राप्तकरचा इति ॥ यातैं यह विद्वान्पुरुष आपशुभकर्मोविषेप्रवृत्तहोइकै तिनअज्ञानीपुरुषोंकूंभी शुभकर्मविषेहींप्रवृत्तकरै ॥ तिनशुभकर्मोंकेकरणेतैं जभी तिन अज्ञानीपुरुषोंकेअंतःकरणकीशुद्धिहोवै ॥ तभी यह विद्वान्पुरुष तिनअज्ञानीपुरुषोंकेप्रति अकर्त्ताअभोक्ताआत्मकाउपदेशकरै इति ॥ २६ ॥ ॥ तहांअज्ञानी पुरुष तथाज्ञानीपुरुष दोनोंविषे शुभकर्मोंकेअनुष्ठानकीसमानताहुएभी कर्तृत्वअभिमान तथाता कर्तृत्वअभिमानकाअभाव यादोनोंहेतुवोंकरिकै अज्ञानी तथाज्ञानी दोनोंकीविलक्षणताकूं दिखावताहुआ श्रीभगवान् (सक्ताःकर्मण्यविद्वांसो) यापूर्वउक्तश्लोककेअर्थकूं दोश्लोकोंकरिकैस्पष्टकरैहै ॥

(मू० श्लो०) प्रकृतेःक्रियमाणानिगुणैःकर्माणिसर्वशः ॥ अहंकारविमूढात्माकर्ताहमितिमन्यते ॥ २७ ॥ प्रकृतेः । क्रियमाणानि । गुणैः । कर्माणि । सर्वशः । अहंकारविमूढात्मा । कर्त्ता । अहम् । इति । मन्यते ॥२७॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन मायाके गुणोंनैं सर्वप्रकारतैं सर्वकर्म करीतेहैं अहंकारकरिकैविमूढहूआहैअंतःकरणजिसका ऐसाअज्ञानीपुरुष मैं कर्मोंका कर्त्ताहूं याप्रकार मांनेहै ॥ २७ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन जामाया सत्त्व रज तम यातीनगुणरूपहै तथामिथ्याज्ञानरूपहै तथा (देवात्मशक्तिंस्वगुणैर्निगूढाम्) इस श्वेताश्वतरउपनिषदकीश्रुतिविषे जिस मायाकूं परमेश्वरकी शक्तिरूपकरिकै कथनकरयाहै तामायाकानाम प्रकृतिहै तहांश्रुति ॥ (मायांतुप्रकृतिं विद्यान्मायिनंतुमहेश्वरम् ॥) अर्थ यह ॥ मायाकूं जगत्का प्रकृति जानना तथामायाउपाधिवालेकूं महेश्वरजाननाइति ॥ ऐसीमायारूपप्रकृतिके विकाररूप जितनैंकी देहइंद्रियअंतःकरणादिक कार्यकारणरूप गुणहैं ॥ तिनगुणोंनेहीसर्वप्रकारते लौकिकवैदिकसर्वकर्मकरितेहैं ॥ यह असंगआत्मा तिनकर्मोंकूंकरता नहीं ॥ तथापि कार्यकारणरूपसंघातविषे आत्म

त्वबुद्धिरूपजोअहंकारहै ताअहंकारकरिके विमूढहुआहै क्या विवेककरणेविषेअसमर्थहूआहै आत्मा क्या अंतःकरणजिसका ताकानाम अहंकारविमूढात्माहै ॥ ऐसा अनात्मपदार्थोंविषे आत्मत्वअभिमानकरणेहारा अज्ञानीपुरुष तिनदेहादिकोंकेअध्यासकरिके तिनसर्वकर्मोंका मैंहीकर्त्ताहूं याप्रकार आपणे आत्माकूंही कर्त्ता मानेहै ॥ तिनप्रकृतिकेगुणोंकूं कर्मोंका कर्त्ता मानतानहीं इति ॥ २७ ॥ ॥ अबजैसे अज्ञानीपुरुष तिनकर्मोंकाकर्त्ता आपणेआत्माकूंहींमानेहैं ॥ तैसे विद्वान्ज्ञानीपुरुष तिनकर्मोंकाकर्त्ता आपणेआत्माकूंमानतानहीं ॥ याअर्थकूं श्रीभगवान् कथनकरेहैं ॥

(मू०श्लो०) तत्त्ववित्तुमहाबाहोगुणकर्मविभागयोः ॥ गुणागुणेषुवर्त्ततइतिमत्वानसज्जते ॥२८॥ तत्त्ववित्। तु ।महाबाहो। गुणकर्मविभागयोः। गुणाः। गुणेषु । वर्त्तते। इति। मत्वा। न। सज्जते ॥ २८ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेमहान्बाहुवालाअर्जुन गुणकर्मविभागके यथार्थस्वरूपकूंजानणेहाराविद्वान्पुरुष तौ इंद्रियादिककरणहीं रूपादिकविषयोंविषे प्रवृत्तहोवेहैं नअसंगआत्मा ईस प्रकार मानि करिके नहीं कर्तृत्वअभिमानकरेहैं ॥ २८ ॥ (इति पदार्थः) ॥

॥ टीका ॥ तत्वनाम यथार्थस्वरूपकाहै तिसकूंजोजानेहै ताकानाम तत्त्ववित्है ॥ इहां (तत्त्ववित्तु) यावचनविषे स्थितजो तु यहशब्दहै ॥ सोतुशब्द पूर्वश्लोकविवेकथनकरेहुए अज्ञानीपुरुषतैं तातत्त्ववेत्तापुरुषविषे विलक्षणताकूं कथनकरेहै ॥शंका॥ हेभगवन् सोविद्वान्पुरुष किसवस्तुकेतत्त्वकूंजाने ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान्कहेहैं (गुणकर्मविभागयोःइति) अहंअभिमानकेविषयरूप जेदेहइंद्रियअंतःकरणहैं तिनोंकानाम गुणहै ॥ और मम अभिमानकेविषयरूप जे तिनदेहइंद्रिय अंतः करणकेव्यापारहैं तिनव्यापारोंकानाम कर्महै ॥ और जोवस्तु सर्वजड विकारोंकाप्रकाशकहोणेते तिनसर्वजड विकारोतैं पृथक्होवै ताकानाम विभागहै ॥ ऐसास्वप्रकाशकज्ञानरूपअसंग आत्माहै ॥ तहां तेगुणकर्मतो भास्य जडविकारी रूपहैं ॥ और यहविभागरूपआत्मादेवतौ भासक चेतन निर्विकारूपहै ॥ इसप्रकार गुणकर्म तथाविभाग यादोनोंकेयथार्थस्वरूपकूंजानणेहारा जोविद्वान्पुरुषहै ॥ सोविद्वान्पुरुषतौ यहइंद्रियादिककरणहीं विकारीहोणेते आपणेआपणे रूपादिकविषयोंविषे प्रवृत्तहोवैहैं निर्विकार आत्मा तिनरूपादिकविषयोंविषे प्रवृत्तहोतानहीं याप्रकारकानिश्चयकरिके अज्ञानीपुरुषकीन्यांई आपणेआत्माविषे कर्तृत्व अभिमान करैनहीं इति ॥ और किसीटीकाविषे तो (तत्त्ववित्तुमहाबाहो) याश्लोकका याप्रकारकाअर्थकर्‍याहै ॥ चक्षुआदिकपंचज्ञानइंद्रिय तथा वाकादिकपंचकर्मइंद्रिय बुद्धि मन इनसर्वोंकानाम गुणहै ॥ और तिनचक्षुआदिकइंद्रियोंकेजेव्यापारहैं तिनोंकानाम कर्महै ॥ विभाग यापदका गुणपदकेसाथि तथाकर्मपदकेसाथि दोनोंकेसाथि संबंध करणा ॥ ताकरिकैयहअर्थसिद्धहोवैहै ॥ चक्षुश्रोत्रादिकइंद्रियोंकीही दर्शन श्रवणादिकक्रियाहैं ॥ और

वाक्पाणिआदिकइंद्रियोंकीही वचन आदानादिकक्रियाहैं ॥ और बुद्धिकीही अहंकरणरूपक्रियाहै ॥ और मनकीही संकल्परूप क्रियाहै आत्माकी कोईभीक्रिया नहींहै ॥ किंतु यह आत्मादेव सर्वदा कूटस्थअसंगचित्रूपकरिकैस्थित है इस प्रकारकाजो गुणविभागहै तथा कर्मविभागहै ॥ तिनदोनोंविभागोंके तथाआत्माके यथार्थस्वरूपकूं जोभलीप्रकारतैंजानेहैताकानाम तत्त्ववित्‌है ऐसातत्ववेत्ताविद्वान्पुरुषतौ सर्वकर्मोंविषे यह चक्षुआदिकइंद्रियही रूपादिकविषयोंविषेप्रवृत्तहोवैहैं तथावाकादिकइंद्रियही वचनादिकोंविषेप्रवृत्तहोवैहैं तथाबुद्धिही तिनचक्षुआदिकइंद्रियोंके कर्मोंविषे मैं कर्त्ताहूं याप्रकारकाअभिमानकरेहै मैंआत्मातौं नश्रवणकरताहूं नदेखताहूं नबोलताहूं नकरताहूं नचालताहूं किंतुकूटस्थअसंगचेतनरूपकरिके सर्वदा तूष्णीं हीस्थितहूं याप्रकारकानिश्चयकरिके तिनइंद्रियादिकोंकेकर्मविषे अहंममअभिमानकरतानहींइति ॥ औरकिसीटीकाविषेतौं (तत्त्ववित्तु) याश्लोककेपदोंकी इसप्रकारतैं योजनाकरिके याप्रकारकाअर्थ कथनकरयाहै (यस्तत्त्ववित्सगुणाःगुणेषुवर्त्ततेइतिमत्वागुणविभागेकर्मविभागेचनसज्जते) इतियोजना ॥ अर्थयह ॥ आत्मा अनात्मा यादोनोंके यथार्थस्वरूपकूंजानणेहारा ॥ जोविद्वान्पुरुषहै ॥ सोविद्वान्पुरुषतौं बुद्धिचक्षुआदिकगुणही सुखरूपादिकविषयोंविषेप्रवृत्तहोवैहैं आत्मातौ किसीभीविषयविषेप्रवृत्तहोतानहीं याप्रकारकानिश्चयकरिके गुणविभागविषे तथाकर्मविभागविषे अहंममअभिमानकरैनहीं ॥ ईहां सत्व रज तम यातीनोंगुणोंका जो बुद्धि अहंकार ज्ञानइंद्रिय कर्मइंद्रिय विषय रूपकरिकै भिन्नभिन्न अवस्थानहै ताकानाम गुणविभागहै ॥ तागुणविभागविषे मैं बुद्धिअहंकारादिरूपहूं याप्रकारकाअहं अभिमान सोतत्त्ववेत्तापुरुष करैनहीं ॥ और तिनबुद्धिअहंकारादिकोंके जे भिन्नभिन्न कर्महैं तिनोंकानाम कर्मविभागहै ॥ ताकर्मविभागविषे यहकर्ममेराहैयाप्रकारका ममअभिमान सोतत्त्ववेतापुरुष करैनहीं इति ॥ ईहां (हेमहाबाहो) यासंबोधनकरिके श्रीभगवान्ने यहअर्थ सूचनकरया ॥ जानुपर्यंत जिसकादीर्घबाहुहोवैहैं ताकानाम महाबाहुहै ॥ और सामुद्रिकशास्त्रविषे महाबाहुपणा श्रेष्ठपुरुषकालक्षणकह्या ॥ यातैं ऐसेश्रेष्ठपुरुषों केलक्षणवालाहोईकै तूं अन्यपुरुषोंकीन्याई अविवेकीहोणेकूंयोग्यनहींहैं इति ॥ २८ ॥ ❀ ॥ तहां पूर्वप्रसंगविषे विद्वान् तथा अविद्वान् यादोनोंविषे कर्मोंकेअनुष्ठानकी समानताकथनक रिकेसोविद्वान्पुरुषअविद्वान्पुरुषकेबुद्धिभेदकूं नहींउत्पन्नकरै यहअर्थ कथनकरया ॥ ताअर्थका अबउपसंहारकरेहैं ॥

(मू.श्लो.) प्रकृतेर्गुणसंमूढाःसज्जंतेगुणकर्मसु ॥ तानकृत्स्नविदोमंदान्कृत्स्नविन्नविचालयेत् ॥२९॥ प्रकृतेः। गुणसंमूढाः। सज्जंते। गुणकर्मसु। तान्। अकृत्स्नविदः। मंदान्। कृत्स्नवित्। न। विचालयेत् ॥२९॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन प्रकृतिके गुणों

करिकैसंमूढहूए जेअज्ञानीजीव तिनंगुणोंकेकर्मोंविषे आसक्तिकरेहैं तिनं अनात्मवेत्ता अनधिकारीपुरुषोंकूं आत्मवेत्ताविद्वान् शुभकर्मकीश्रद्धातैं नहीं चलायमानकरे ॥ २९ ॥ (इतिपदार्थः)

टीका ॥ हेअर्जुन पूर्वकथनकरीजा मायारूपप्रकृतिहै ॥ ताप्रकृतिका कार्यरूपहोणेतैं धर्मरूपजे देहइंद्रियअंतःकरणादिकविकारहैं ॥ तिनविकाररूपगुणोंकरिके संमूढहुए अर्थात् स्वरूपकेअस्फुरणकारिके तिनदेहादिकोंकूंही आत्मारूपकरिकेमानतेहुए जेअज्ञानीपुरुष तिनदेहइंद्रियअंतःकरणादिकोंकेव्यापारोंविषेही हम स्वर्गादिकफलकीप्राप्तिवासते कर्मोंकूंकरेहैं याप्रकारकी अत्यंतदृढ आत्मीयत्वबुद्धिकरेहैं ॥ तिन कर्मोंकेअधिकारी तथाअनात्मपदार्थोंके अभिमानवाले तथा अशुद्धचित्तवाले होणेतैं ज्ञानकेअधिकारकूंनहींप्राप्तहुए अज्ञानीपुरुषोंकूं यहपरिपूर्णआत्माकेजाणनेहारा विद्वान्पुरुष आप फलकीकामनाकारिकैकर्मनहींकरणे अथवा इनकर्मोंकाफल असत्है अथवा कर्मोंकेकर्तादिक मिथ्याहीहै अथवा तू ब्रह्मरूपहै तेरेकूं किंचित्मात्रभीकर्तव्यनहींहै इत्यादिकउपदेशकरिके तिनशुभकर्मोंकीश्रद्धातैं चलायमाननहींकरै ॥ किंतु उलटा तिनशुभकर्मोंकीस्तुतिकरिकै सोविद्वान्पुरुष तिनअज्ञानीपुरुषोंकूंतिनशुभकर्मोंविषेहींप्रवृत्तकरैं ॥ और जेपुरुष शुद्धअंतःकरणवालेहोणेतैं अधिकारीहैं ॥ तेपुरुषतौं उपदेशतैंविनाआपहीं विवेककीउत्पत्तिकरिके चलायमानतातेरहित ज्ञानकेअधिकारकूंप्राप्तहोवेहैं इति ॥ ईहां जिसवस्तुकेज्ञानहुएभी तिसतैंअन्यवस्तुकाज्ञानहोवैनहीं ॥ तथा जिसवस्तुकेनहींज्ञानहुएभी तिसतैंअन्यवस्तुकाज्ञानहोइजावै तावस्तुकानामअकृत्स्नहै ॥ जैसेएकघटकेज्ञानहुएभी तावटतैंभिन्नपटादिकोंकाज्ञानहोवैनहीं ॥ और ताघटकेनहींज्ञानहुएभी ताघटतैंभिन्नपटादिकपदार्थोंकाज्ञानहोइजावैहै ॥ यातैं तेघटादिकसर्वअनात्मपदार्थ अकृत्स्न यानामकरिकेकहेजावेहैं ॥ और जिसएकवस्तुकेज्ञानहुए सर्ववस्तुकाज्ञानहोइजावै तथाजिसएकवस्तुके नहींज्ञानहुए सर्ववस्तुकाज्ञानहोवैनहीं तावस्तुकानाम कृत्स्नहै ॥ जैसे एकअद्वितीयआत्माकेज्ञानहुए सर्वअनात्मपदार्थोंकाज्ञानहोइजावैहै ॥ और ताअद्वितीय आत्माके नहींज्ञानहुए तिनसर्वअनात्मपदार्थोंकाज्ञानहोवैनहीं ॥ यातैं सोअद्वितीयआत्मा कृत्स्न यानामकरिकैकह्याजावैहै ॥ तहांश्रुति ॥ (आत्मनोवाअरेदर्शनेनश्रवणेनमत्याविज्ञानेनेदंसर्वंविदितम्) अर्थ यह ॥ हेमैत्रेयी अधिष्ठानरूपआत्माके दर्शनकरिके तथाश्रवणकारिकै तथामननकरिकै तथाविज्ञानकारिकै यहसर्वअनात्मजगत् जान्याजावैहैइति ॥ याप्रकारका अकृत्स्न कृत्स्न या दोनोंशब्दोंकाअर्थ वार्तिकग्रंथविषे सुरेश्वराचार्यने कथनकऱ्याहैइति ॥ और किसीटीकाविषेतौं (प्रकृतेः) यापदका (गुणकर्मसु) यापदके साथि अन्वयकरिके यह अर्थकऱ्याहै ॥ अहंकारादिकगुणोंकारिकैसंमूढहुए अज्ञानीपुरुष प्रकृतिके देहादिकगुणोंविषे तथागमनादिककर्मोंविषे मैं ब्राह्मणहूं मेरायह्यज्ञादिककर्महै याप्रकारका अहंममअभिमानकरेहैं इति ॥ २९ ॥ ❁ ॥ पूर्वप्रसंगविषे अज्ञानीपुरुष तथाज्ञानवान्पुरुष दोनोंविषे शुभकर्मोंकेअनुष्ठा

नकीसमानताकेहूएभी अज्ञानीपुरुषविषेतो कर्तृत्वकाअभिमानरहेहै और ज्ञानीपुरुषविषे ताकर्तृत्वअभिमानकाअभावरहेहै याप्रकारतैं दोनोंकी विलक्षणता कथनकरी॥ अब अज्ञानीपुरुषभी दोप्रकारकाहोवैहैं ॥ एक तौ मोक्षकीइच्छावाला मुमुक्षु अज्ञानीहोवैहै ॥ और दूसरा मोक्षकीइच्छातैंरहित अमुमुक्षु अज्ञानीहोवैहैं ॥ तहां अमुमुक्षु अज्ञानीकीअपेक्षाकरिके मुमुक्षु अज्ञानीविषे सर्वकर्मोंकाश्रीभगवत्अर्पण तथाफलकीइच्छाकाअभाव याप्रकारकीविलक्षणताकूंकथनकरताहुआ श्री भगवान् अर्जुनविषेभी मुमुक्षुअज्ञानीपणेकरिकेकर्मोके अधिकारकूंदृढकरे है ॥

(मू. श्लो.) मयिसर्वाणिकर्माणिसंन्यस्याध्यात्मचेतसा ॥ निराशीर्निर्ममोभूत्वायुध्यस्वविगतज्वरः॥३०॥मयि । सर्वाणि । कर्माणि संन्यस्य । अध्यात्मचेतसा । निराशीः । निर्ममः । भूत्वा । युध्यस्व । विगतज्वरः ॥ इतिप० ॥ हेअर्जुन तूं मैंपरमेश्वरविषे अध्यात्मचित्तकरिकै सर्व कर्मोंकूं समर्पणकरिकै कामनातैंरहिततथाममतातैंरहित तथाशोकतैंरहित होइकै ईसयुद्धकूंकर ॥ ३० ॥ इतिपदार्थः॥

॥ टीका ॥ हे अर्जुन ! सर्वज्ञ तथा सर्वजगत्कानियंता तथासर्वकाआत्मारूप ऐसा जो मैं परमेश्वरवासुदेवहूं ॥ ऐसेमैं परमेश्वरविषे तू सर्वलौकिकवैदिककर्मोंकूं अध्यात्मचित्तकरिकै समर्पणकर ॥ इहां आत्माकेप्रतिपादनकरणेवासतै जोशास्त्र प्रवृत्तहोवै ताशास्त्रकानाम अध्यात्महै ऐसाउपनिषद्रूप वेदांतशास्त्रहै ॥ ता अध्यात्मशास्त्रकेविचारविषे जो चित्त तत्परहोवै ताचित्तकानाम अध्यात्मचेतस्है ॥ अर्थात् आत्मा अनात्माकेविवेकवाले चित्तकानाम अध्यात्मचेतस्है ॥ ऐसे अध्यात्मचित्तकरिके तूं सर्वकर्मोंकू मैंपरमेश्वरविषे समर्पणकर ॥ तात्पर्ययह ॥ मैंअर्जुन कर्त्तारूपअंतर्यामीईश्वरके आधीनहूं ॥ और जैसे भृत्य महाराजकेवासतैंहीं सर्वकर्मौंकूंकरेहैं ॥ तैसे मैंभी तिसईश्वरकेवासतेहीं सर्वकर्मोंकूकरताहूं ॥ याप्रकारकीबुद्धिकरिके तिनसर्व कर्मोंका मैंईश्वरविषे अर्पणकरिके तथासर्वकामनावोंतैंरहितहोइकै तथा देहपुत्रभ्राताादिकोंविषे ममताअभिमानतैंरहितहोइकै तथाइसलोकविषे अपकीर्तिकाहेतुरूप तथापरलोकविषेनरककेप्राप्तिकाहेतुरूप जो शोकरूपज्वरहै ताशोकरूपज्वरतैंरहितहोइके तूंमुमुक्षुअज्ञानीअर्जुन इसयुद्धकूंकर ॥ अर्थात् शास्त्रविहितशुभकर्मोंकूंकर ॥ इहां श्रीभगवत्अर्पण तथानिष्कामपणा यहदोनों युद्धविषेहीकथनकरेहैं ॥ काहेतैं तायुद्धतैंभिन्नकिसीकर्म विषे ताअर्जुनका ममता तथाशोक प्राप्तहैनहीं ॥ किंतु तायुद्धविषेहीप्राप्तहै इति ॥ ३० ॥ ॥ तहां स्वर्गादिकफलकीइच्छातैरहितहोइकै तथाश्रीभगवत्अर्पणबुद्धिकरिके वेदविहितशुभकर्मोंकाजोअनुष्ठानहै ॥ सोशुभकर्मोंकाअनुष्ठानही अंतःकरणकीशुद्धिद्वारा तथाआत्मज्ञानकीप्राप्तिद्वारा मुक्तिरूपफलकीप्राप्तिकरणेहाराहैं याअर्थकूं अभी श्रीभगवान् कथनकरेहै ॥

(मू. श्लो.) येमेमतमिदंनित्यमनुतिष्ठंतिमानवाः ॥ श्रद्धावंतोनसूयंतोमुच्यंतेतेपिकर्मभिः ॥३१॥ ये । मे । मतं । इदं । नित्यं । अनुतिष्ठंति । मानवाः । श्रद्धावंतः । अनसूयंतः । मुच्यन्त । ते । अपि । कर्मभिः ॥इतिपदच्छेदः॥ हेअर्जुन जेकेई मनुष्य श्रद्धावान्हुए तथाअसूयातैंरहितहुए हमारे इस नित्य मतकू अंगीकार करेहैं तेपुरुष भी पुण्यपापकर्मोंनैं परित्यागकरोतेहैं॥३१॥इतिपदार्थः॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन फलकीइच्छातैंरहितहोइकै तथाश्रीभगवत्अर्पणबुद्धिकरिके या अधिकारीपुरुषने शास्त्रविहितशुभकर्मोंकाअनुष्ठानकरणा यहजो हमारामतहै ॥ सोहमारामतनित्यवेदकरिकैबोधितहोणेतैं अनादिपरंपराकरिकैप्राप्तहै यातै नित्यहै अथवा सोहमारामत अधिकारीपुरुषोंकूंअवश्यकरिके करणेयोग्यहै यातैं नित्यहै ॥ ऐसेहमारेनित्यमतकूंजेकोईमनुष्य श्रद्धावालेहुए तथाअसूयातैंरहितहुए अंगीकार करेहैं ॥ इहां शास्त्रनैंतथागुरनैं उपदेशकऱ्याजोअर्थहै ॥ सोअर्थ जोकदाचित् आपणे अनुभवविषे नहींभीआवताहोवै ॥ तौंभीताअर्थविषे यहअर्थइसीप्रकारहै याप्रकारकाजो विश्वासहै ताविश्वासकानाम श्रद्धाहै ॥ और किसीपुरुषकेगुणोंविषे जोदोषों काप्रगटकरणाहै याकानाम असूयाहै ॥ साअसूया ईहांप्रसंगविषे याप्रकारकीप्राप्तहै ॥ इसदुःखरूपयुद्धधर्मविषे मैंअर्जुनकूं प्रवृत्तकरताहूआ यहभगवान् करुणातैं रहितहैइति ॥ ऐसी असूयाकूं सर्वप्राणीयोंकेसुहृदरूप तथागुरुरूप मैंभगवान्वासुदेवविषे नहींकरतेहुए जेमनुष्य हमारेइसमतकूं श्रद्धाभक्तिपूर्वक अंगीकारकरेहैं ॥ तेमनुष्यभी अंतःकरणकीशुद्धिद्वारा तथाज्ञानकीप्राप्तिद्वारा यथार्थज्ञानीकीन्यांई पुण्यपापकर्मोंनैं परित्यागकरतेहै अर्थात् पुण्यपापकर्मोंतैंरहितहोवैहैं ॥ तात्पर्ययह ॥ ताज्ञानवान्पुरुषके भावीशरीरोंकीप्राप्तिकरणेहारे जितनैंकीपुण्यपापरूपसंचितकर्महैं ॥ तेसंचितकर्मतौं ज्ञानरूपअग्निकरिकैदग्धहोइजावैहैं ॥ और जिन प्रारब्धकर्मोंनैं यहशरीरदियाहै ॥ तेप्रारब्धकर्म भोगकरिकै क्षयहोवैहैं ॥ और सो ज्ञानवान् इस वर्त्तमानशरीरविषे जेपुण्यपापकर्मकरेहै ॥ तेपुण्यपापकर्म ताज्ञानवान् पुरुषकी सेवाकरणेहारे भक्तजन तथा निंदाकरणेहारे दुष्टजन लेजावैहैं ॥ तहांश्रुति ॥ (तस्यपुत्रादायमुपयांतिसुहृदःसाधुकृत्यांद्विषंतःपापकृत्यां) ॥ अर्थ यह ॥ तिसज्ञानवान्पुरुषके धनादिकपदार्थोंकूंतौं पुत्रशिष्यादिक लेजावैहैं ॥ और तिसज्ञानवान्पुरुषके पुण्यकर्मोंकूंतौं सेवाकरणेहारे भक्तजन लेजावे हैं ॥ और तिसज्ञानवान्के पापकर्मोंकूंतौं निंदाकरणेहारे दुष्टजन लेजावैहै इति ॥ इसप्रकार सोविद्वान्पुरुष सर्वपुण्यपापकर्मोंतैंरहितहोवैहै ॥ ईहां शास्त्रविहित नित्यनैमित्तिककर्मोका मनुष्यकूंहीं अधिकारहै ॥ अन्य किसीकूंअधिकारहैनहीं यातैं श्रीभगवान्नैं (मानवाः) यहवचन कथनकऱ्याहै इति ॥ ३१ ॥ ❀ ॥ तहां पूर्वश्लोकविषे भगवत्अर्पणबुद्धिकरिकै निष्कामकर्मोकाअनुष्ठानरूपजोभगवत्का मतहै तामतके अंगीकाररूपअन्वयविषे अंतःकरणकी शुद्धिद्वारा तथा ज्ञानकीप्राप्तिद्वारा सर्वकर्मोंतैंरहिततारूपगुणका कथनकऱ्या ॥ अब इसश्लोकविषे ताभगवत्मतकेनहीं अंगीकाररूपव्यतिरेकविषे दोषकेप्राप्तिका कथनकरैहैं ॥

(मू० श्लो०) येत्वेतदभ्यसूयंतोनानुतिष्ठंतिमेमतम् ॥ सर्वज्ञानविमूढाँस्तान्विद्धिनष्टानचेतसः ॥ ३२ ॥ ये । तु । एतत् । अ भ्यसूयंतः । न अनुतिष्ठंति । मे । मतम् । सर्वज्ञानविमूढान् । तान् । वि द्धि । नष्टान् । अचेतसः ॥ ३२ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन ! पुनः जेपुरुष दोषकूंआरोपणकरतेहूए हमारे इसपूर्वउक्त मतकूं नहीं अंगीकारकरेहैं तिनपुरुषोंकूं तूं दुष्टचित्तवाला जान तथा सर्वज्ञानविषे मूढ जान तथा सर्वपुरुषार्थतैंभ्रष्टजान ॥ ३२ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हे अर्जुन जेकोईपुरुष नास्तिकपणेतैं गुरुशास्त्रकेवचनोंविषे श्रद्धाकूंनहींकरतेहुए तथा गुणोंविषेदोषोंका कथनरूपअसूयाकूंकरतेहूए यापूर्वउक्त हमारेमतकूं नहींअगीकारकरेहैं ॥ तिनपुरुषोंकूं तूं अत्यंत दुष्टचित्तवालाजान ॥ याकारणतैंहीं कर्मविषयक जेज्ञानहैं तथा सगुणनिर्गुणब्रह्मविषयक जेज्ञानहैं तिन सर्वज्ञानोंविषे प्रमाणतैं तथाप्रमेयतैं तथाप्रयोजनतैं तेपुरुष विशेषकरिकै मूढहूएजान ॥ तात्पर्ययह ॥ तेकर्मविषयकज्ञान तथा सगुणनिर्गुणब्रह्मविषयकज्ञान किसप्रमाणकरिकै जन्यहैं तथा तिनज्ञानोंका प्रमेय कौनहै तथा तिनज्ञानोंका प्रयोजन कौनहै याअर्थकूं तेपुरुष जानिसकतेनहीं ॥ याकारणतैंहीं तिनपुरु षोंकूं तू सर्वपुरुषार्थोंतैंभ्रष्टहूआजान इति ॥ ३२ ॥ ❁ ॥ शंका ॥ हेभगवन् जैसे इसलोकविषे जेपुरुष महाराजाकेआज्ञाका उल्लंघनकरेहैं ॥ तिनपुरुषोंकूं महान् भयकीप्राप्तिहोवेहै ॥ तैसे आप ईश्वरकीआज्ञाकेउल्लंघनकरणेविषे महान्भयकीप्राप्तिकूं देखतेहुएभीतेपुरुष किसकारणतैं असूयाकरतेहुए ताआपकेमतकूं नहींअंगीकारकरेहैं ॥ तथा किसकारणतैं तिनसर्वपुरुषार्थोंके साधनोंविषे प्रतिकूलताबुद्धिकरेहैं ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहूए श्रीभगवान् उत्तरकहेहैं ॥

(मू० श्लो०) सदृशंचेष्टतेस्वस्याःप्रकृतेर्ज्ञानवानपि ॥ प्रकृतिंयांतिभूतानिनिग्रहःकिंकरिष्यति ॥ ३३ ॥ सदृशं । चेष्टते । स्वस्याः । प्रकृतेः । ज्ञानवान् । अपि । प्रकृतिं । यांति । भूतानि । निग्रहः । किं । करिष्यति ॥ ३३ ॥ (इति पदच्छेदः) हेअर्जुन ज्ञानवान्पुरुष भी आपणी प्रकृतिके अनुसारही चेष्टाकरेहै याते सर्वप्राणी ताप्रकृतिकूंही अनुसरणकरेहैं तिसविषे हमारानिग्रह क्या करैगा ॥ ३३ ॥

॥ टीका ॥ हे अर्जुन! पूर्वजन्मोंविषेकरयेहुए धर्म अधर्मके तथा ज्ञानइच्छादिकोंके जेसंस्कारहैं ॥ जेसंस्कार इसवर्त्तमानजन्मविषे अभिव्यक्तिकूं प्राप्तभयेहैं ॥ तिन अभिव्यक्तसंस्कारोंकानाम प्रकृतिहै ॥ साप्रकृति सर्वप्रकारतैं बलवान्है ॥ ऐसी बलवान्प्रकृतिके अनुसारहीं ब्रह्मवेत्तापुरुषभी चेष्टाकरेहै ॥ अथवा (ज्ञानवान्) यापदकरिकै केवल गुणदोषके जाणनेहारेपुरुषकाग्रहणकरणा ॥ तहां आचार्यवचनं ॥ (पश्वादिभिश्चाविशेषात्) ॥ अर्थयह ॥ खानपानादिकव्यवहारकालविषे

विद्वान्पुरुषकी पश्वादिकोंकेसाथि तुल्यताहीहै इति ॥ ऐसाब्रह्मवेत्ताज्ञानवान् अथवा गुणदोषकेजानणेहारा ज्ञानवान्भी जबी आपणे संस्काररूपप्रकृतिकेअनुसार ही चेष्टाकरेहैं ॥ तबी दूसरेअज्ञानीमूर्खपुरुष आपणेप्रकृतिकेअनुसारहीं चेष्टाकरेहैं याकेविषेक्याकहणाहै ॥ यातैं साप्रकृति यद्यपि अविवेकीप्राणियोंकूं पुरुषार्थतैं भ्रष्टकरणेहारीहै तथापि तेसर्वप्राणी ताप्रकृतिकूंहीं अनुसरणकरेहैं ॥ तिसविषे मैंपरमेश्वरकृतनिग्रह तथाराजकृतनिग्रह क्याकरैगा ॥ अर्थात् उत्कटरागकरिकै पापकर्मोंविषेप्रवृत्तहुएपुरुषोंकूं सोनिग्रह तापापकर्मतैंनिवृत्तकरणेविषे समर्थनहींहै ॥ तात्पर्ययह ॥ जेपुरुष पापकर्मोंविषे महान्नरककीसाधनाकूंजानिकरिकैभी दुर्वासनाकीप्रबलतातैं पुनः तिनपापकर्मोंविषेहीं प्रवृत्तहोवैहैं ॥ तेपुरुष मेरीआज्ञाकेउल्लंघनजन्यदोषतैं कदाचित्भयनहींकरैंगे इति ॥ ३३ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हेभगवन् जोकदाचित् सर्वप्राणी आपणीआपणी प्रकृतिकेहीवशवर्तीहोवैं ॥ तौ लौकिकपुरुषार्थका तथा वैदिकपुरुषार्थका कोईभीविषयहोवैगानहीं ॥ यातैं (स्वर्गकामोयजेत) इत्यादिकविधिवाक्योंविषे तथा (परदारान्नगच्छेत) इत्यादिकनिषेधवाक्योंविषे अनर्थकताप्राप्तहोवैगी ॥ काहेतैं इसलोकविषे पूर्वसंस्काररूपप्रकृतितैंरहित कोईभीप्राणीहैनहीं ॥ जिसकेप्रति तिनविधिनिषेधवाक्योंकूं अर्थवेत्ताहोवै ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान् उत्तरकहेहैं ॥

(मू. श्लो.) इंद्रियस्येंद्रियस्यार्थेरागद्वेषौव्यवस्थितौ ॥ तयोर्नवशमागच्छेत्तौह्यस्यपरिपंथिनौ ॥ ३४ ॥ इंद्रियस्य । इंद्रियस्य । अर्थे । रागद्वेषौ । व्यवस्थितौ । तयोः । न । वशम् । आगच्छेत् । तौ । हि । अस्य । परिपंथिनौ । इतिप० ॥ हेअर्जुन इंद्रिय इंद्रियके शब्दादिकविषयविषे रागद्वेषदोनों नियमपूर्वकास्थितहैं तिनरागद्वेषदोनोंके वशकूं यहप्राणीनहीं प्राप्तहोवै जिसकारणतै तेराग द्वेषदोनों इसप्राणीके शत्रुहीहैं ॥ ३४ ॥ इतिपदार्थः ॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन श्रोत्र त्वक् चक्षु रसन घ्राण यह जेपंचज्ञानइंद्रियहैं ॥ तथा वाक् पाणि पाद उपस्थ पायु यह जे पंचकर्मइंद्रियहैं ॥ तिनज्ञानइंद्रियोंके तथा कर्मइंद्रियोंके जे यथाक्रमतैं शब्द स्पर्श रूप रस गंध वचन आदान गमन आनंद मलविसर्जन यह दश विषयहैं ॥ तिनशब्दस्पर्शादिकविषयोंविषे तथा वचनआदानादिकविषयोंविषेजोजोविषय इसपुरुषकेअनुकूलहोवैहै ॥ सोसोविषय जोकदाचित् शास्त्रकरिकैनिषिद्धभी होवैहै ॥ तौभी तिसतिसविषयविषे इसपुरुषकारागहीं होवैहै ॥ और तिनविषयोंविषे जोजोविषय इसपुरुषके प्रतिकूलहोवैहै ॥ सोसोविषय जोकदाचित् शास्त्रकरिकैविहितभीहोवैहै ॥ तौभी तिसतिसविषयविषे इसपुरुषका द्वेषहीहोवैहै ॥ इसप्रकार श्रोत्रादिकसर्वइंद्रियोंके शब्दादिकसर्वविषयोंविषे अनुकूलताकरिकै तथाप्रतिकूलताकरिकै तेरागद्वेषदोनों नियमपूर्वकही स्थितहैं ॥ कोईतिनसर्व विषयोंविषे नियमतैं विनाहीं तेरागद्वेषस्थितहैं नहीं ॥ तहां इसपुरुषनैं ता रागद्वेषकेवशकूंनहींप्राप्तहोना यहही आपणेपुरुषार्थका तथाशास्त्रका विषयहै ॥ ईहां हयतात्प

येंहै ॥ यहपरस्त्रीगममादिककर्ममहान्नरककीप्राप्तिकरणेहारेहैं याप्रकारकाजो बलवत्अनिष्टसाधनताज्ञानहै ॥ ताज्ञानकेअभावसहकृत जो यहपरस्त्रीगमनादिककर्म हमारेविषयसुखरूपइष्टकेसाधनहैं याप्रकारका इष्टसाधनताज्ञानहै ता इष्टसाधनताज्ञानकरिकै जन्यजो तिनपरस्त्रीगमनादिककर्मोंविषे रागहै॥ तारागकूं अंगीकारकरिकैही साप्रकृति इसपुरुषकूं तिनपरस्त्रीगमनादिकनिषिद्धकर्मोंविषे प्रवृत्तकरेहै ॥ इसीप्रकार यहसंध्यावंदनादिककर्म स्वर्गादिकफलकीप्राप्तिकरणेहारेहैं याप्रकारकाजो इष्टसाधनताज्ञानहै ॥ ताज्ञानकेअभावसहकृतजो यहसंध्यावंदनादिककर्म हमारे दुःखरूप अनिष्टकेसाधनहैं याप्रकारका अनिष्टसाधनताज्ञानहै ॥ ताअनिष्टसाधनताज्ञानकरिकेजन्यजो तिनसंध्यावंदनादिककर्मोंविषेजोद्वेषहै ताद्वेषकूंअंगीकारकरिकैहीं साप्रकृति तापुरुषकूं तिनसंध्यावंदनादिकविहितकर्मोंतैं निवृत्तकरेहै ॥ तहां जिसकालविषे धर्मशास्त्र तिनपरस्त्रीगमनादिककर्मोंविषे यहपरस्त्रीगमनादिककर्म नरककीप्राप्तिकरणेहारेहैं याप्रकारबलवत्अनिष्टसाधनताकूं बोधनकरेहै ॥ तिसकालविषे बलवत्अनिष्टसाधनताज्ञानकाअभावरहैनहीं जैसे घटरूपप्रतियोगीविद्यमानहुए घटाभावरहैनहीं ॥ और तिनपरस्त्रीगमनादिकनिषिद्धकर्मोंविषे रागकीउत्पत्तिकरणेमेंताइष्टसाधनताज्ञानका सोबलवत्अनिष्टसाधनताज्ञानकाअभावही सहकारीकारणथा ॥ तासहकारीकारणकेअभावहुए सो केवल इष्टसाधनताज्ञान तिनपरस्त्रीगमनादिकनिषिद्धकर्मोंविषे रागकूंउत्पन्नकरिसकैनहीं ॥ जैसे मधुविषयादोनोंकरिकैयुक्तजोअन्नहै ताअन्नविषे यहअन्न हमारेक्षुधाकेनिवृत्तिकासाधनहै याप्रकारके इष्टसाधनताज्ञानकेहुएभी जिसपुरुषकूं ताअन्नविषे यहअन्न हमारेमरणकासाधनहै याप्रकारका अनिष्टसाधनताज्ञानहुआहै तिसपुरुषके सोकेवलइष्टसाधनताज्ञान ताअन्नविषे रागकूं उत्पन्नकरिसकेनहीं ॥ इसीप्रकार जिसकालविषे धर्मशास्त्रसंध्यावंदनादिकविहितकर्मोंविषे ॥ यहसंध्यावंदनादिककर्म स्वर्गादिकसुखकेप्राप्तिकासाधनहैं याप्रकार बलवत्इष्टसाधनताकूं बोधनकरेहै ॥ तिसकालविषे तिनसंध्यावंदनादिकविहितकर्मों विषे बलवत्इष्टसाधनताज्ञानकाअभाव रहैनहीं ॥ जैसे घटरूपप्रतियोगीकेविद्यमानहूए घटाभाव रहैनहीं ॥ और तिनसंध्यावंदनादिकविहितकर्मोंविषे द्वेषकीउत्पत्तिकरणेमें ताअनिष्टसाधनताज्ञानका सोबलवत्इष्टसाधनताज्ञानकाअभावही सहकारीकारणथा ॥ तासहकारीकारणकेअभावहुए सोकेवलअनिष्टसाधनताज्ञानका तिनसंध्यावंदनादिकविहितकर्मोंविषे द्वेषकूंउत्पन्नकरिसकैनहीं ॥ यातैंयहअर्थसिद्धभया ॥ प्रतिबंधतैंरहितहूआ सोशास्त्र इसपुरुषकूं संध्यावंदनादिकविहितकर्मोंविषेतैं प्रवृत्तकरेहै ॥ औरपरस्त्रीगमनादिकनिषिद्धकर्मोंतैं निवृत्तकरेहै ॥ इसप्रकार शास्त्रकेविचारजन्यज्ञानकीप्रबलताकारिकै जबी तास्वाभाविकरागद्वेषकेकारणकी निवृत्तिहोवेहै ॥ तबी ताकारणकीनिवृत्तिकारिकै सोस्वाभाविकरागद्वेषरूपकार्यभी निवृत्तहोइजावैहै ॥ यातैं साप्रकृति विपरीतमार्गविषे शास्त्रदृष्टिवालेपुरुषकूं प्रवृत्तकरिसकैनहीं॥यातैं शास्त्रकूं तथापुरुषार्थकूं व्यर्थताकीप्राप्तिहोवैनहींइति॥इसीअभिप्रायकरिकै श्रीभगवान्ने (तयोर्नवशमागच्छेत्) यहवचनकह्याहै अर्थात्

यहपुरुष तारागद्वेषकेअधीनहोइके नहींतौं किसीकर्मविषेप्रवृत्तहोवै तथानहीं किसीकर्मतैंनिवृत्तहोवै ॥ किंतुशास्त्रजन्यज्ञानकरिकै तारागद्वेष तारागद्वेषके नाशद्वातारागद्वेषकूं नाशहींकरै ॥ जिसकारणतैं स्वाभाविकदोषजन्यतेरागद्वेषदोनों इसमोक्षरूपश्रेयकीइच्छावान्पुरुषके शत्रुहींहैं ॥ तात्पर्ययह ॥ जैसे मार्ग विषेचलणेहारेपुरुषोंकूं दुष्टचोर अनेकप्रकारकेविघ्नकरेहैं ॥ तैसे मोक्षरूपश्रेयके आत्मज्ञानरूपमार्गविषेप्रवृत्तहूए इसअधिकारीपुरुषकूं ते रागद्वेषदोनों अनेकप्रकारके विघ्नकरणेहारेहैं॥ यातैं यहअधिकारीपुरुष तारागद्वेषकूं अवश्यकरिकैनाशकरै इति॥ ३४॥ ॥शंका ॥ हेभगवन् ! स्वाभाविकरागद्वेषकरिकैजन्यजा पशुमनुष्यादिकस र्वप्राणीयोंकी साधारणप्रवृत्तिहै॥तासाधारणप्रवृत्तिकीनिवृत्तिकरिकै जबी इसपुरुषकू शास्त्रविहितकर्महीं करणेयोग्यहूआ॥ तबी जैसे इसयुद्धविषेशास्त्रविहितकर्मरूप ताहै॥ तैसे संन्यासपूर्वक भिक्षाअन्नकेभोजनविषेभी शास्त्रविहितकर्मरूपताहै॥यातैं अत्यंतसुगम तथाहिंसादिकोंतैंरहित जोभिक्षाअन्नकाभोजनहै ॥ सोईहीं हमारेकूं करणेयोग्यहै ॥ अत्यंतदुःखरूप तथाहिंसादिकोंकाकारणरूप इसयुद्धकेकरणेविषेहमारा क्याप्रयोजनहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहूए ॥ श्रीभगवान्उत्तर कहेहैं ॥

(मू० श्लो०) श्रेयान्स्वधर्मोविगुणःपरधर्मात्स्वनुष्ठितात् ॥ स्वधर्मेनिधनंश्रेयःपरधर्मोभयावहः ॥ ३५ ॥ श्रेयान् । स्वधर्मः । विगुणः। परधर्मात्। स्वनुष्ठितात् । स्वधर्मे । निधनं । श्रेयः । परधर्मः । भयावहः ॥ ३५ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन! सर्वअं गोंकीसंपूर्णता पूर्णतापूर्वककरच्येहूए परकेधर्मतैं किंचित् अंगोंकीन्यूनतापूर्वककरच्याहूआ आपर्णाधर्म अत्यंत श्रेष्ठहै इसकारणतैं ताआपणे धर्मविषे मरणभी श्रेष्ठहै और परकाधर्मतौं भयकींहींप्राप्तिकरणेहाराहै ॥ ३५ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन! ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र यहजेच्यारिवर्णहैं ॥ तथा ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ संन्याससह जेच्यारिआश्रमहैं ॥ तिनच्यारिवर्णोंविषे तथाच्या रिआश्रमविषे जिसजिसवर्णकेप्रति तथाजिसजिसआश्रमकेप्रति धर्मशास्त्रनैं जोजोधर्म विधानकरच्या सोसोधर्म तिसतिसवर्णका तथातिसतिसआश्रमका तथा स्वधर्म कह्याजावैहै ॥ दूसरेवर्णनका तथादूसरेआश्रमका सोसोधर्म परधर्म कह्याजावैहै ॥ जैसे बृहस्पतिसवनामायज्ञ शास्त्रने एकब्राह्मणकेप्रतिही विधान करच्याहै ॥ क्षत्रियादिकोंकेप्रति विधानकरच्यानहीं॥ यातैं सोबृहस्पतिसवनामायज्ञ ब्राह्मणकातौं स्वधर्महै ॥ क्षत्रियादिकोंका परधर्महै ॥ इसप्रकार राजसूयनामायज्ञ शास्त्रनैं एकक्षत्रियकेप्रतिहीं विधानकरच्याहै ॥ ब्राह्मणादिकोंकेप्रति विधानकरच्यानहीं ॥ यातैं सोराजसूयनामायज्ञ क्षत्रियकातौं स्वधर्महै ॥ ब्राह्मणादिकोंका परधर्महै ॥ इसप्रकार सर्वअसाधारणधर्मविषे स्वधर्मता तथा परधर्मता जानिलेणी॥ ईश्वरनामस्मरणादिकसाधारणधर्मोंविषेतौं सर्वप्राणीमात्रकी स्वधर्मताहींरहैहै किसीभीप्राणकी परधर्मतारहैनहीं॥ याकारणतैं असाधारणधर्मकह्याहै॥ तहां द्रव्य मंत्र देवता इत्यादिकजेकर्मके अंगहैं॥ तिनसर्वअंगोंकी सपूर्णतातैंविनाहीं जोधर्म करच्याजावैहै ॥ सो

धर्मविगुणकह्याजावैहै॥ इसप्रकारका विगुणजोस्वधर्महै॥सोस्वधर्म तिनसर्वअंगोंकीसंपूर्णतापूर्वककरचेहूएपरधर्मतैंअत्यंतश्रेष्ठहै ॥ काहेतैं एकवेदप्रमाणकूंछोडिकै दूस
राकोईप्रमाण धर्मविषेहैनहीं किंतुता धर्मविषे एकवेदहीप्रमाणहै॥यहवार्ता(नोदनालक्षणोऽर्थोधर्मः)इसपूर्वमीमांसाकेसूत्रविषे विस्तारतैंकथनकरीहै यातैं परधर्मजोहै
सोभीअनुष्ठानकरणेकूंयोग्यहै धर्महोणेतैं स्वधर्मकी न्याई याप्रकारकाअनुमान ताधर्मविषे प्रमाणहोइसकैनहीं ॥ यातैं यत्किंचित्अंगोंकीन्यूनताकारिकै विगुणभावकूंप्रा
तभयाजो स्वधर्महै ॥ ताविगुणस्वधर्मविषेभी स्थितजोपुरुषहै॥तास्वधर्मनिष्ठपुरुषका परधर्मविषेस्थितपुरुषकेजीवनतैं मरणभी अत्यंतश्रेष्ठहै ॥ काहेतैं स्वधर्मविषेंस्थित
पुरुषकाजोमरणहै सोमरण इसलोकविषेतौं तापुरुषकूं कीर्तिकीप्राप्तिकरणेहाराहै ॥ और परलोकविषे स्वर्गादिकोंकीप्राप्तिकरणेहाराहै ॥ यातैं सोमरणभी
अत्यंतश्रेष्ठहै ॥ और परधर्मतौं इसपुरुषकूं इसलोकविषेतौं अकीर्तिकीप्राप्तिकरेहै ॥ और परलोकविषे नरकादिकोंकीप्राप्तिकरेहै ।। यातैं जैसे रागद्वेषकरिकै
जन्य स्वाभाविकप्रवृत्ति इसपुरुषकूं परित्यागकरणेयोग्यहै ।। तैसे यहपरधर्मभी परित्यागकरणेकूंयोग्यहै इति ।। तहां पूर्वप्रसंगविषे श्रीभगवान्केमतकूंअंगीकार
करणेहारेपुरुषोंकूं श्रेयकीप्राप्ति कथनकरी ॥ और ताभगवान्केमतकूंनहींअंगीकारकरणेहारेपुरुषोंकूं ताश्रेयकेमार्गतैंभ्रष्टपणा कथनकरचा ॥ और ताश्रेयकेमार्गतैं
भ्रष्टहोणेविषे तथाफलकीइच्छापूर्वककाम्यकर्मोंकेकरणेविषे तथाकेवलपापकर्मोंकेकरणेविषे (येत्वेतदभ्यसूयंतः) इत्यादिकवचनोंकारिकै बहुतकारण कथनकऱ्ये॥
तिनसर्वकारणोंकूंसंक्षेपतैकथनकरणेहारा ।। यहश्लोकहै ।। (श्रद्धाहानिस्तथासूयादुष्टचित्तत्त्वमूढते ।। प्रकृतेर्वशवर्त्तित्वंरागद्वेषौचपुष्कलौ ।। परधर्मरुचित्वं
चेत्युक्तादुर्मार्गवाहकाः) अर्थयह ।। श्रद्धातैंरहितहोणा तथाअसूयाकरणी तथाचित्तकीदुष्टता तथामूढतातथाप्रकृतिकेवशवर्तिहोणा तथापुष्कलरागद्वेष
तथापरधर्मविषेप्रीतिकरणी यहसर्व दुर्मार्गकीप्राप्तिकरणेहारेहैं इति ।। ३५ ।। ❋ ।। तहां इसपुरुषकी काम्यकर्मोंविषेप्रीतिकरावणेहारा तथानिषिद्धकर्मोंविषे
प्रीतिकरावणेहारा जोकोई कारणहै ताकारणकूंनिवृत्तिकारिकै श्रीभगवान्के तापूर्वउक्तमतकूं आश्रयणकरणेवासतै अर्जुन प्रथम ताकारणकास्वरूपपूछेहै ।।

(मू०श्लो०) अर्जुनउवाच ॥ अथकेनप्रयुक्तोयंपापंचरतिपूरुषः ॥ अनिच्छन्नपिवार्ष्णेयबलादिवनियोजितः ॥ ३६ ॥ अथ । केन ।
प्रयुक्तः । अयं । पापं । चरति । पूरुषः । अनिच्छन् । अपि । वार्ष्णेय । बलात् । इव । नियोजितः ॥ ३६ ॥ (इतिपदच्छेदः)
हेवार्ष्णेय यह पुरुष पापकरणेकीनहींइच्छाकरताहूआ भी बलात्कारतैं प्रवृत्तकऱ्येहूएपुरुषकी न्यांई किसकरिकै प्रवृत्तकऱ्या
हूआ पाप कर्मकूं करेहै ॥ ३६ ॥ (इतिपदार्थः)

।। टीका ॥ हेभगवन् (ध्यायतोविषयान्पुंसः) इत्यादिकवचनोंकरिकै पूर्वभी आपनैं अनर्थकामूल कथनकऱ्याथा ।। और अबीभी आपनै (प्रकृतेर्गुणसंमूढाः)

इत्यादिकवचनोंकरिकै बहुतप्रकारका सोअनर्थकामूल कथनकऱ्याहै ॥ तहां तेसर्वहीं समानप्रधानताकरिकै अनर्थकेकारणहैं ॥ अथवा तिनसर्वोविषे एकहींमुख्य कारणहै दूसरे सर्वगौणहैं ॥ तहां ॥ प्रथमपक्षविषेतौं तिनसर्वकारणोंकूं भिन्नभिन्न निवृत्तकरणेविषे महान्परिश्रमहोवैगा ॥ और दूसरेपक्षविषेतौं ताएकहीं प्रधानकारणके निवृत्तकिये हूए इसपुरुषकूं कृतकृत्यभावकीप्राप्ति होवैगी ॥ यातैं हेभगवन्! आप यहवार्त्ताकहो ॥ तुमारेमतकूंनहींअंगीकारकरणेहारा तथासर्वज्ञानोंविषेमूढ यहपुरुष किसबलवान्कारणकरिकै प्रवृत्तकऱ्याहूआ अनर्थकीप्राप्तिकरणेहारे अनेकप्रकारकेनिषिद्धकर्मोंकूं तथाकाम्यकर्मोंकूं करेहै ईहां परस्त्रीगमनादिक निषिद्धकर्म हैं ॥ और शत्रुकेनाशकरणेहारेश्येनयज्ञादिक काम्यकर्महैं ॥ तेदोनोंप्रकारकेकर्म इसपुरुषकूं अनर्थकीहींप्राप्ति करणेहारेहैं ॥ यातैं तिनदोनोंप्रकारकेकर्मोंका पापशब्दकरिकैग्रहणकऱ्याहै इति ॥ हेभगवन्! यहपुरुष आप तिनपापकर्मोंकेकरणेकीनहीं इच्छाकरताहूआभी बलात्कारतैं तिनपापकर्मोंकूंहींकरेहै ॥ और परमपुरुषार्थकासाधनरूप करिकै आपनैं उपदेशकऱ्याजोकर्महै ॥ ताकर्मकेकरणेकीइच्छाकरताहूआभी यहपुरुष ताकर्मकूंकरतानहीं ॥ यातैं यहजान्याजावैहै ॥ यहपुरुष परतंत्रहै स्वतंत्रनहींहै ॥ परतंत्रतातैंविना यहवार्त्ता संभवतीनहीं ॥ यातैं हेभगवन् जैसे महाराजानैं किसीकार्यविषे बलात्कारसैं प्रवृत्तकऱ्याजोकोईभृत्यहै ॥ सोभृत्य ताकार्यकेकरणेकीनहींइच्छाकरताहूआभी ताकार्यकूं अवश्यकरिकै करेहै ॥ तैसे जिसबलवान्कारणकरिकै प्रवृत्तकऱ्याहूआ यहपुरुष तुमारेमतकेविरोधीपापकर्मोंकूं सर्वअनर्थोंकामूलभूतजानताहूआभी तिनपापकर्मोंकूंहींकरेहै ॥ तिस अनर्थविषेप्रवृत्तकरणेहारेकारणका स्वरूप आप हमारेप्रति कथनकरो ॥ जिसकारणकेस्वरूपकूंजानिकरिकै मैंअर्जुन तिसकारणकेनाशकरणेवासतै प्रयत्नकरौ इति ॥ ईहां (अनिच्छन्नपि) यावचनकरिकै अर्जुननैं यहअर्थ सूचनकऱ्या ॥ पूर्वकथनकऱ्येहूए रागद्वेषविषेभी प्रवृत्तिकीकारणतासंभवैनहीं ॥ काहेतैं रागके विद्यमानहूए इच्छा अवश्यकरिकैहोवैहै ॥ यातैं यापुरुषविषे इच्छाकेअभावहूए तारागकाभीअभावहींहै ॥ जबी तारागविषे अप्रवर्त्तकतासिद्धभई ॥ तबी तारागजन्यसंस्कारोंकरिकैजन्यजोधर्मअधर्महै ताधर्मधर्मविषेभी साप्रवर्त्तकता संभवैनहीं ॥ और ताधर्मअधर्मविषे अप्रवर्त्तकताहूए ताधर्मअधर्मकीअपेक्षाकरणेहारेईश्वरविषेभी साप्रवर्त्तकता संभवैनहींइति ॥ और (हेवार्ष्णेय) यासंबोधनकेकहणेकरिकै अर्जुननैं यहअर्थ सूचनकऱ्या ॥ हमारे मातामहकाकुल जोवृष्णिवंशहै तावृष्णिवंशविषे आपणेभक्तजनोंकेउद्धारकरणेवासतै आपनैं अवतारधारणकऱ्याहै ॥ और मैंअर्जुनभी तावृष्णिवंशविषेउत्पन्नहूई कुंतीमाताकापुत्रहूं ॥ यातैं हमारेकूं आपना जानिकरिकै आपनैं हमारीउपेक्षानहीं करणी ॥ किंतु इसहमारेप्रश्नका आपनैं यथार्थउत्तरकहणा इति ॥ ३६ ॥ ❁ ॥ इस प्रकार अर्जुनकरिकैपूछाहूआ श्रीभगवान् । (काममयएवायंपुरुषःइति आत्मैवेदमग्रआसीदेकएव सोकामयत जायामेस्यात् अथप्रजामेस्यात् अथवित्तंमेस्यात्

अथकर्मकुर्वीय) इत्यादिकश्रुतियोंकरिकै सिद्ध तथा । (अकामस्यक्रियाकाचिद्दृश्यतेनेहकर्हिचित् ॥ यद्यद्धिकुरुतेजंतुस्तत्तत्कामस्यचेष्टितम्) इत्यादिक स्मृतियोंकरिकैसिद्ध उत्तरकूं कहताभया ॥ तिनश्रुतियोंका तथास्मृतिवचनका यह अर्थहै यहपुरुष काममयहींहैइति ॥ इस जगत्कीउत्पात्तितैंपूर्व एकं आत्माहींहोताभया ॥ सोआत्मादेव याप्रकारकीकामना करताभया ॥ हमारेकूं जायाप्राप्त होवै ॥ तथा हमारेकूं प्रजाप्राप्तहोवै तथा हमारेकूं धनप्राप्तहोवै ॥ तथा मैं कर्मोंकूं करौंइति ॥ और यालोकविषे कामनातैंरहितपुरुषकी कोईभीक्रिया देखणेविषेआवतीनहीं ॥ यातैं यहजीव जिसजिसकर्मकूंकरेहै ॥ सोसर्व इसकामकीहींचेष्टाहैइति ॥ इत्यादिकश्रुतिस्मृतियोंकरिकेसिद्धउत्तरकूं श्रीभगवान् कहेहैं ॥

(मू. श्लो.) श्रीभगवानुवाच ॥ कामएषक्रोधएषरजोगुणसमुद्भवः ॥ महाशनोमहापाप्माविद्ध्येनमिहवैरिणम् ॥३७॥ कामः । एषः । क्रोधः । एषः । रजोगुणसमुद्भवः । महाशनः । महापाप्मा । विद्धि । एनं । इह । वैरिणम् ॥३७॥ इतिपदच्छेदः ॥ हेअर्जुन सोअनर्थ मार्ग विषेप्रवृत्तकरणेहारा यह कामहींहै यहकामही क्रोधरूपहै तथारजोगुणतैंउत्पन्नभया है तथामहान् आहारवालाहै तथाअत्यंत उग्रहै यातैं इससंसारविषे इसकामकूंही तूं वैरीरूप जान ॥३७॥ इतिपदार्थः ॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन! इसपुरुषकूं बलात्कारसे अनर्थमार्गविषेप्रवृत्तकरणेकाकारण जो तुमने पूछाथा ॥ सोकारण यहकामरूपमहान्शत्रुहींहै ॥ इसकामकरि केही इनप्राणियोंकूं सर्वअनर्थोंकीप्राप्तिहोवैहै ॥ शंका ॥ हेभगवन् जैसे यहकामप्राणियोंकूं अनर्थविषेप्रवृत्तकरेहै ॥ तैसे क्रोधभी इनप्राणियोंकूं ॥ सर्वअनर्थविषेप्रवृत्तकरेहै ॥ यातैंकेवलकामविषेही प्रवर्त्तकता संभवैनहीं ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान् कहेहैं (क्रोधएषः इति) हेअर्जुन यह विष योंकीअभिलाषारूपजोकामहै ॥ ताकामते सोक्रोध भिन्ननहींहै ॥ किंतु यहकामहींक्रोधरूपहोवैहै ॥ तात्पर्ययह ॥ जोकोईपुरुषकिसीधनादिकपदार्थोंकीइच्छा करिकै जबी किसीधनीपुरुषकेसमीपजावैहै ॥ आगेतैंकोईदुष्टपुरुष तापुरुषकीइच्छा पूर्णहोणेदेवैनहीं ॥ तबी तापुरुषका सोइच्छारूपकामहीं तादुष्टपुरुषऊपरि क्रोधरूप होइकै परिणामकूंप्राप्तहोवैहै ॥ यहवार्ता सर्वलोकोंकूं अनुभवसिद्धहै ॥ यातैं सोकामहींक्रोधरूपहै इति ॥ ताकामरूपमहाशत्रुके निवृत्तकि येहुए इसपुरुषकूं सर्वपुरुषार्थोंकीप्राप्तिहोवैहै ॥ अबताकामरूपशत्रुकेनिवृत्तकरणेहारेउपायकेजनावणेवास्ते ताकामरूपशत्रुकेकारणकूं कथनकरेहैं (रजोगुण समुद्भवः इति) हेअर्जुन दुःखप्रवृत्तिबलरूपजोरजोगुणहै ॥ सोरजोगुणहैसमुद्भवनाम कारणजिसका ऐसायहकामहै ॥ और लोकविषेकारणकेसमानस्वभाववाला हींकार्यहोवैहै ॥ यातैं जैसे सोरजोगुणरूपकारण दुःखप्रवृत्तिआदिरूपहै ॥ तैसे यहकाम रूपकार्यभीदुःखप्रवृत्तिआदिरूपहींहै ॥ यद्यपि रजोगुणकीन्यांई तमो

गुणभी ताकामकाकारणहै ॥ यातैं (रजोगुणसमुद्भवः) यावचनकीन्यांई तमोगुणसमुद्भवः यहभीवचनकहणाउचितथा ॥ तथापि दुःखविषे तथाप्रवृत्तिविषे रजोगुणकूंहीं प्रधानताहै ॥ तमोगुणकूंप्रधानताहैनहीं ॥ यातैं ईहां रजोगुणकाहीकथनकरयाहै ॥ इतनैंकहनेकरिकैश्रीभगवानूंनैं यहअर्थबोधनकऱ्या ॥ सात्विकवृत्तिकरिकै जबी ताराजोगुणरूपकारणकीनिवृत्तिहोवैहै ॥ तबी कारणकेनिवृत्तहुए सोकामरूपकार्य आपहींनिवृत्तहोइजावैहै ॥ यातैं सा सात्विकवृत्तिहीं रजोगुणकीनिवृत्तिद्वारा ताकामकेनिवृत्तिकाउपायहैइति ॥ अथवा ॥ हेभगवन् ताकामकूं किसप्रकारतैं अनर्थविषेप्रवर्त्तकताहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान् कहेहैं (रजोगुणसमुद्भवःइति) हेअर्जुन दुःखप्रवृत्ति आदिरूपजोरजोगुणहै ताराजोगुणकाहै समुद्भवनाम उत्पत्तिजिसतैं ताकानाम रजोगुणसमुद्भवहै ॥ ऐसारजोगुणकाकारणरूप यहकामहै ॥ तात्पर्ययह ॥ विषयोंकीअभिलाषारूपजोयहकामहै ॥ सोयहकाम आपप्रगटहोइकै ताराजोगुणकूं प्रवर्त्तकरताहुआ इसपुरुषकूं दुःखरूपकर्मोंविषे प्रवृत्तकरैहैइति ॥ यातैं अधिकारीपुरुषोंनैं यहकामरूपशत्रु अवश्यकरिकै जयकरणेयोग्यहै ॥ शंका ॥ हेभगवन् ! इसलोकविषे शत्रुकेजयकरणेवास्तै साम दान भेद दंड यहच्यारि उपायहोवैहैं ॥ तहां साम दान भेद यातीनउपायोंकारिकै जो शत्रु वशनहींहोताहोवै ॥ तौ ताशत्रुकेजयकरणेवासतै चौथा दंडरूपउपायकरणा ॥ परंतु तिन तीनउपायोंकेक्रियेतैंविनाहीं प्रथमहीं सोदंडरूपउपायकरणा उचितनहींहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए ॥ श्रीभगवान् ताकामरूपशत्रुकेजीतणेविषे प्रथम तीनउपायोंकेअसंभवकहणेवास्तै ताकामरूपशत्रुके दोविशेषण कहेहैं (महाशनोमहापाप्माइति) महान्‌है अशन क्या आहार जिसका ताकानाम महाशनहै ॥ ऐसायहकामहै ॥ तात्पर्ययह ॥ अनेकप्रकारकेमहान् भोगोंकीप्राप्तिकरिकैभी यहकाम कदाचित्‌भी तृप्तहोवैनहीं ॥ यहवार्ता स्मृतिविषेभी कथनकरीहै ॥ तहांश्लोक ॥ (नजातुकामःकामानामुपभोगेनशाम्यति ॥ हविषाकृष्णवर्त्मेवभूयएवाभिवर्द्धते ॥१॥ यत्पृथिव्यांव्रीहियवंहिरण्यंपशवःस्त्रियः ॥ नालमेकस्यतत्सर्वमितिमत्वाशमंव्रजेत् ॥२॥ अर्थ यह यहकाम पदार्थोंकेभोगकरिके कदाचित्‌भी शांतिकूंप्राप्तहोतानहीं ॥ किंतु जैसे अग्नि घृतकाष्ठादिकोंकेपावणेकरिकै वृद्धिकूंप्राप्तहोता जावैहै ॥ तैसे यहकामभी बहुतपदार्थोंकेभोगकरिकैदिनदिनविषे वृद्धिकूंप्राप्तहोताजावैहै ॥ और इसपृथिवीविषे जितनैंकीव्रीहियवादिकअन्नहै ॥ तथा जितनैंकीसुवर्णादिकधनहैं ॥ तथा जितनैंकि गोअश्वादिकपशुहैं ॥ तथा जितनीकि सुंदरास्त्रियांहैं ॥ तेसर्वपदार्थ जोकदाचित् कामनावालेकिसीएकपुरुषकूंभी प्राप्तहोवै ॥ तौभी तेसर्वपदार्थ तापुरुषकेकामकूं तृप्तकरणेविषे समर्थहोवैनहीं ॥ तौ अल्पभोगोंकरिकै ताकामकीशांति कैसेहोवैगी ॥ किंतुनहींहोवैगी ॥ याप्रकारकाविचारकरिकै यहपुरुष शांतिकूंप्राप्तहोवै ॥ २ ॥ यातैं तादानरूपउपायकरिकै यहकामरूप शत्रु वशहोवैनहीं ॥ इसप्रकार साम भेद यादोनोंउपायोंकरिकैभी

यहकामरूपशत्रु वशहोवैनहीं ॥ जिसकारणतैं यहकामरूपशत्रु महापाप्माहै क्या अत्यंतउग्रहै ॥ याकारणतैंहीं इसकामकरिकेप्रेरणाकरचाहूआ यहपुरुष पापकर्मोंतैं दुःखरूपफलकीप्राप्तिकूंजानताहुआभी पुनः तिनपापकर्मोंकूंहींकरेहै ॥ ऐसाअत्यंतउग्र यहकामरूपशत्रु साम भेद या दोनोंउपायोंकरिकै वशहोइ सकैनहीं ॥ जिसकारणतैं लोकविषेऋजुस्वभाववालेशत्रुहींता साम भेदरूपउपायकरिकैवशहोवै हैं ॥ यातैं हेअर्जुन इससंसारविषे तूं इसकामकूंहींशत्रुरूप जान इति ॥ ३७ ॥ ❀ तहांपूर्वश्लोकविषे अत्यंतउग्ररूपकरिकै ताकामविषे कथनकरचा जोशत्रुपणा ता शत्रुपणेकूं अब तीनदृष्टांतोंकरिकै स्पष्टकरेहैं ॥

(मू० श्लो०) धूमेनाव्रियतेवह्निर्यथादर्शोमलेनच ॥ यथोल्बेनावृतोगर्भस्तथातेनेदमावृतम् ॥ ३८ ॥ धूमेन । आव्रियते । वह्निः । यथा । आदर्शः । मलेन । च । यथा । उल्बेन । आवृतः । गर्भः । तथा । तेन । इदम् । आवृतम् ॥ ३८ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन जैसें धूमने अग्नि आवृतकरिताहै तथा जैसे रजरूपमलनैं दर्पण आवृतकरिताहै तथा जैसें जरायुचर्मने गर्भ आवृत करताहै तैसें तिसकामनैं यह ज्ञान आवृतकरचाताहै ॥ ३८ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन इसस्थूलशरीरकेआरंभतैंपूर्व अंतःकरण कामादिकवृत्तियोंकूं प्राप्तहोवैनहीं॥ यातैं यास्थूलशरीरकीउत्पत्तितैंपूर्व सोअंतःकरणसूक्ष्म कहाजावैहै और शरीरकेआरंभकरणेहारेपुण्यपापकर्मोंकरिकैरचित जोयहस्थूलशरीर है ॥ तास्थूलशरीरविषे स्थितहोइके सोअंतःकरण कामादिकवृत्तियोंकूंप्राप्तहोवैहै यातैं तास्थूलशरीरावच्छिन्नअतःकरणविषे अभिव्यक्तिकूंप्राप्तहूआ सोकाम स्थूल कह्याजावैहै ॥ और सोईहींकाम विषयोंके चिंतनअवस्थाविषे पुनःपुनः वृद्धिकूंप्राप्त हुआ स्थूलतर कह्याजावैहै ॥ और सोईहींकाम तिनविषयोंकेभोग अवस्थाविषे अत्यंतवृद्धिकूंप्राप्तहुआ स्थूलतम कह्याजावैहै ॥ यहां स्थूलतैंभी अधिकस्थूलकानाम स्थूलतरहै ॥ और स्थूलतरतैंभी अधिकस्थूलकानाम स्थूलतमहै ॥ इसप्रकार सोएकहींकाम स्थूल स्थूलतर स्थूलतम यातीनअवस्थावोंवालाहोवैहै ॥ तहांताकामके प्रथम स्थूलअवस्थाविषे दृष्टांतकथनकरेहैं (धूमेनाव्रियतेवह्निः इति) हेअर्जुन जैसे अग्निकेसाथि उत्पन्नभयाजो अप्रकाशरूपधूमहै ॥ ताअप्रकाशरूपधूमनैं प्रकाशरूपअग्नि आवृतकरीताहै ॥ तैसे इसस्थूलकामनैं यहज्ञान आवृतकरीताहै ॥ अब ताकामकी दूसरीस्थूलतरअवस्थाविषे दृष्टांत कथनकरेहैं (यथादर्शोमलेनचइति) हेअर्जुन जैसे दर्पणतैंपश्चात्उत्पन्नभयाजो रजरूपमलहै ॥ तिस रजरूपमलनैं सोदर्पण आवृतकरीताहै ॥ तैसे इस स्थूलतरकामनैंभी यहज्ञान आवृतकरीताहै ॥ अब ताकामकीतीसरी स्थूलतमअवस्थाविषे दृष्टांतकथनकरेहैं (यथोल्बेनावृतोगर्भः इति) हेअर्जुन जैसे माताकेउदरविषे स्थितगर्भकूं सर्वओरतैंवलेटरह्याहुआ जो जरायुनामाचर्महै ॥ ताजरायुनामाचर्मनैं सोगर्भ आवृतकरीताहै ॥ तैसे इसस्थूलतमकामनैं यहज्ञान

आवृतकरीताहै ॥ ईहां इनतीनदृष्टांतोंविषे परस्पर इतनीविशेषताहै ॥ ताधूमकरिकैआवृतहुआभीअग्नि दाहादिरूपआपणेकार्यकूंकरतानहींहै ॥ और रजरूप मलकरिकैआवृतहुआजोदर्पणहै ॥ सोदर्पणतो प्रतिबिंबकाग्रहणरूपआपणेकार्यकूंकरतानहीं ॥ जिसकारणतैं तादर्पणकेस्वच्छतामात्रकातारजरूपमलकरिकै तिरोधानहोइरह्याहै ॥ परंतु सोदर्पण स्वरूपतैंतौं प्रतीतहोतारहेहै ॥ और जरायुनामाचर्मकरिकैआवृतजोगर्भहै ॥ सोगर्भ तौं हस्तपादादिकोंकाप्रसारणरूप आपणे कार्यकूंभी करतानहीं ॥ तथा आपणेस्वरूपतैं भी प्रतीतहोतानहीं ॥ याप्रकारकी तिनदृष्टांतौंकीविलक्षणताकूंअंगीकारकरिकैहीं ताकामकी स्थूल स्थूलतर स्थूलतमयातीनअवस्थावोंविषे यथाक्रमतैं तेतीनदृष्टांत कथनकरेहैंइति ॥ ३८ ॥ ॥ तहां पूर्वश्लोकविषे (तथातेनेदमावृतं यहजोसंग्रहवचनकह्याथा) तासंग्रहवचनकेअर्थकूं अब विस्तारकरिकै कथनकरेहैं ॥

(मू. श्लो.) आवृतंज्ञानमेतेनज्ञानिनोनित्यवैरिणा ॥ कामरूपेणकौंतेयदुष्पूरेणानलेनच ॥ ३९ ॥ आवृतं । ज्ञानम् । एतेन । ज्ञानिनः । नित्यवैरिणा । कामरूपेण । कौंतेय । दुष्पूरेण । अनलेन । च । इतिपदच्छेदः ॥ ३९ ॥ हेकौंतेय इसकामनैंही यहज्ञान आवृतकरयाहै कैसाहैयहकाम ज्ञानीपुरुषका नित्यहींवैरीहै तथाइच्छा तृष्णारूपहै तथा अग्निकी न्यांई पूरितितैंरहितहै ॥ ३९ ॥ इतिपदार्थः ॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन जिसकरिकै वस्तुकूंजानिये ताकानाम ज्ञानहै ॥ ऐसा अंतःकरणहै ॥ अंतःकरण करिकैहीं वस्तु जान्याजावैहै ॥ अथवा अंतःकरणकीवृत्तिरूप जोविवेकविज्ञानहै ताकानाम ज्ञानहै ॥ ऐसाज्ञान इसकामनैंहीं आवृतकरयाहै ॥ शंका ॥ ❀ ॥ हेभगवन् यद्यपि इसकामनैं सोज्ञान आवृतकरयाहै ॥ तथापि अविचारसिद्धसुखकाहेतुहोणेतैंयहकाम ग्रहणकरणेकूंयोग्यहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुये श्रीभगवान्कहेहैं (ज्ञानिनोनित्यवैरिणाइति) हेअर्जुन यहकाम ज्ञानीपुरुषोंकातौ नित्यहींवैरीहै ॥ काहेते अज्ञानीपुरुषतौं विषयभोगकालविषे ताकामकूं मित्रकीन्याईहींजानतेहैं ॥ और ताअज्ञानीपुरुषकूं जबी ताकामका कार्यरूपदुःख आइकैप्राप्तहोवैहै तबी सोअज्ञानीपुरुषइसकामनैंहीं हमारेकूं इसदुःखकीप्राप्तिकरीहै इसप्रकार ताकामकूं शत्रुरूपकरिकैजानेहै यातैं ताअज्ञानीपुरुषका सोकाम नित्यहींवैरीनहींहै ॥ किंतु दुःखरूपपरिणामकालविषे वैरीहै ॥ और ज्ञानवान्पुरुषतौं ताविषयभोगकालविषेभी इसकामनैंही हमारेकूं इसअनर्थविषेप्रवृत्तकरयाहै याप्रकार ताकामकूं वैरीहींजानेहै ॥ यातैं सोज्ञानवान्पुरुष विषयभोगकालविषे तथाताकेदुःखरूपपरिणामकालविषे इसकामकरिकै दुःखीहींहोवैहै ॥ याकारणतैं यहकामताज्ञानवान्पुरुषका नित्यहींवैरीहै ॥ ऐसेनित्यवैरीरूपकामकूं ताज्ञानवान्पुरुषनैं अवश्यकरिकैहननकरणा ॥ शंका ॥ ❀ ॥ हेभगवन् ताकामकेस्वरूपजानेतैंविना ताका हननसंभवैनहीं ॥ यातैं ताकामका स्वरूपकह्याचाहिये ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए

श्रीभगवान्कहेहैं (कामरूपेणइति) हेअर्जुन इच्छातृष्णारूपकामहींहैरूपजिसका ऐसायहकामहै ॥ शंका ॥ हेभगवन् यद्यपि सोकाम विवेकीपुरुषका नित्यहीं वैरीहीहै ॥ यातै विवेकीपुरुषोंनैंतौं ताकामकाअवश्यकरिकै हननकरणा ॥ तथापि अविवेकीपुरुषोंका सोकाम नित्यवैरीहैनहीं ॥ यातैं तिनअविवेकीपुरुषोंनैं तौं ताकामका अवश्यकरिकैग्रहणकरणा ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान् कहेहैं (दुष्पूरेणानलेनचइति) हेअर्जुन जैसे यह अग्नि घृतकाष्ठादिकोंकरिकै तृप्तहोवैनहीं ॥ तैसे यहकामभी अनेकप्रकारकेभोगोंकरिकैभी तृप्तहोवैनहीं ॥ याकारणतैं यहकाम निरंतर संतापकाहींहेतुहै ॥ यातैं विवेकीपुरुषकीन्यांई अविवेकीपुरुषनैंभी ताकामकापरित्यागहींकरणाइति ॥ अथवा ॥ शंका ॥ हेभगवन् इसलोकविषे जोजोइच्छाहोवैहै ॥ सोसोइच्छा आपणेआपणेविषयकीप्राप्तितैंनिवृत्तिहोइजावैहै ॥ और यहकामभी इच्छारूपहीहै ॥ यातैं यहकामभी तिसतिसविषयोंकेभोगकरिकै आपहींनिवृत्तिहोइजावैगा ताकामकीनिवृत्तिकरणेवासतै ॥ दूसरेउपायका कछुप्रयोजननहींहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभगवान्कहेहैं (दुष्पूरेणानलेनचइति) हेअर्जुन विषयकी प्राप्तिकालविषे यद्यपि ताविषयकीइच्छाकातिरोधानहोवैहै ॥ तथापि कालांतरविषेपुनःताइच्छाका प्रादुर्भावहोवैहै ॥ यातैं विषयकीप्राप्ति ताइच्छाकानिवर्त्तक नहींहै ॥ किंतु विषयोंविषे वारंवार दोषदृष्टिहीं ताइच्छाकानिवर्त्तकहै इति ॥ ३९ ॥ ❀ शंका ॥ हेभगवन् इसलोकविषेजिसशत्रुकेस्थानकाज्ञानहोवै है ॥ सोईहींशत्रु जीत्याजावैहै ॥ ताशत्रुकेस्थानकेज्ञानतैंविना सोशत्रु जीत्याजावैनहीं ॥ यातैं इसकामशत्रुके जीतणेवासतैं प्रथम इसकामका अधिष्ठानजान्या चाहिये ॥ जिसअधिष्ठानकेआश्रितहुआयहकाम लोकोंकूं अनर्थकीप्राप्तिकरेहै ॥ सोकामकाअधिष्ठान कौनहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए ॥ श्रीभगवान् ताकामके अधिष्ठानका कथनकरेहैं ॥

(मू० श्लो०) इंद्रियाणिमनोबुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ॥ एतैर्विमोहयत्येषज्ञानमावृत्यदेहिनम् ॥४०॥ इंद्रियाणि । मनः । बुद्धिः । अस्य। अधिष्ठानम् । उच्यते । एतैः । विमोहयति । एषः । ज्ञानम् । आवृत्य। देहिनम् ॥४०॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन इंद्रियं मन बुद्धि यहतीनोंहीं इसकामके अधिष्ठान कहेजावैहैं इनतीनोंकरिकैहीं यहकाम ताज्ञानकूं आवृतकरिकै देहाभिमानीजीवकूं मोहकीप्राप्तिकरेहै ॥ ४० ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हे अर्जुन शब्द स्पर्श रूप रस गंध यापांचोंकूंयथाक्रमतैं विषयकरणेहारे जे श्रोत्र त्वक् चक्षु रसन घ्राण यहपंचज्ञानइंद्रियहैं ॥ तथा वचन आदान गमन आनंद विसर्ग यापंचक्रियावोंके यथाक्रमतैंजनक जे वाक् पाणि पाद उपस्थ पायु यहपंचकर्मइंद्रियहैं ॥ यह दशइंद्रियजोहैं ॥ तथा संकल्प

रूपजोमनहै ॥ तथा निश्चयरूपजोबुद्धिहै ॥ यातीनोंहीं इसकामका अधिष्ठान कहेजावैहैं ॥ इनतीनोंकरिकैहीं यहकाम ताविवेकज्ञानकूं आवृतकरिके देहाभिमानीपुरुषकूं नानाप्रकारकेमोहकीप्राप्तिकरेहै इति ॥ ४० ॥ ❀ ॥ जिसकारणतैं तिनइंद्रियादिकोंकेआश्रितहुआहीं यह काम देहाभिमानीजीवोंकूं अनेकप्रकारकेमोहकीप्राप्तिकरेहै ॥ तिसकारणतैं तूं प्रथम तिनइंद्रियादिकोंकूंहीं जयकर ॥ तिनइंद्रियादिकोंकेजयहुए ताकामकाभी सुखेनहीं जयहोवैगा ॥ याअर्थकूं श्रीभगवान् अर्जुनकेप्रति कथनकरे है ॥

(मू. श्लो.) तस्मात्त्वमिंद्रियाण्यादौनियम्यभरतर्षभ ॥ पाप्मानंप्रजहिह्येनंज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥ ४१ ॥ तस्मात् । त्वम् । इंद्रियाणि । आदौ । नियम्य । भरतर्षभ । पाप्मानं । प्रजहि । हि । एनं । ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥ ४१ ॥ (इति पदच्छेदः) हेअर्जुन तिसकारणतैं तूं अर्जुन प्रथम तिनइंद्रियोंकूं वशकरिकै सर्वपापकेमूलभूत तथाज्ञानविज्ञानकेनाशकरणेहारे इसकामकूं हीं नाशकर ॥ ४१ ॥ इति पदार्थः ॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन जिसकारणतैं इसकामके तेश्रोत्रादिकइंद्रियहीं अधिष्ठानरूपहैं ॥ जैसे किसीराजाके पर्वत दुर्गआदिक अधिष्ठानहोवैहैं ॥ तैसेइसकामके तेश्रोत्रादिकइंद्रियही अधिष्ठानरूपहैं तिसकारणतैं तूअर्जुन ताकामकृतमोहतैंपूर्व अथवा ताकामकेनिरोधतैंपूर्व तिनश्रोत्रादिकइंद्रियोंकूंवशकरिकै इस कामकूंनाशकर ॥ तिनइंद्रियोंकेवशकीयेतैंविना ताकामकानाश कऱ्याजावैनहीं जैसे किसीपर्वतविषे तथाकिसीदुर्गादिकोंविषे स्थितजो कोईराजाहै ॥ ताराजाके तिनपर्वतदुर्गादिकोंकूं आपणेवशकरिकैहीं दूसरेराजे ताराजाकूंनाशकरेहैं ॥ तिनपर्वतदुर्गादिकोंकेवशकीयेतैंविना ताराजाकूं दूसरेराजे नाशकरिसकैंनहीं ॥ तैसे तिनइंद्रियोंकेवशकीयेतैंविना ताकामका नाशहोवैनहीं ॥ और तिनश्रोत्रादिकइंद्रियोंकेवशकियेतैंअनंतर मन बुद्धि यादोनोंकाभीवशकरणा सिद्धहोवैहै ॥ काहेतैं संकल्परूपजोमनहै तथानिश्चयरूपजोबुद्धिहै ॥ यहदोनों बाह्यइंद्रियजन्यवृत्तिद्वाराहीं अनर्थकेकारणहोवेहैं ॥ ताबाह्यइंद्रियजन्यवृत्तितैंविना तिनदोनोंविषे अनर्थकीकारणता संभवैनहीं ॥ यातैं तिनश्रोत्रादिकइंद्रियोंकेवशहूएतैं अनंतर सो मन बुद्धिभी अवश्यकरिकै वशहोवैहै ॥ याकारणतैंहीं पूर्वश्लोकविषे (इंद्रियाणिमनोबुद्धिः) यावचनकरिकै इंद्रिय मनबुद्धि यातीनोंका भिन्नभिन्न कथनकरिकैभी इसश्लोकविषे (इंद्रियाणि) यावचनकरिकै केवल श्रोत्रादिकइंद्रियोंकाहीं कथनकऱ्याहै ॥ अथवा जैसे बाह्यशब्दादिकोंकेज्ञानविषे श्रोत्रादिकोंकूं इंद्रियरूपताहै ॥ तैसे अंतरसुखदुःखादिकोंकेज्ञानविषे मनबुद्धिकूंभी इंद्रियरूपताहै ॥ यातैं (इंद्रियाणि) यापदकरिकै तामनबुद्धिकाभी ग्रहणहोइसकेहैइति ॥ ईहां

(हेभरतर्षभ) यासंबोधनकेकहणेकरिकै श्रीभगवान्‌नैं यहअर्थ सूचनकरया ॥ महान्‌भरतवंशविषे तूं उत्पन्न भयाहै ॥ यातैं तिनइंद्रियोंकेवशकरणेविषे तूंसमर्थहैइति ॥ शंका ॥ हेभगवन् इसलोकविषे जोकोईपुरुषकिसीमहान्‌अपराधकूंकरेहै ॥ तिसपुरुषकाहीं राजादिक नाशकरेहैं अपराधतैंविनाकिसी काभी कोई नाशकरतानहीं ॥ सो ऐसाअपराध इसकामनैं कौंनकरयाहै ॥ जिसअपराधकरिकै मैं इसकानाशकरौं ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए श्रीभग वान् ताकामकृतअपराधका वर्णनकरेहैं (पाप्मानंज्ञानविज्ञाननाशनमिति) हेअर्जुन यहजीव ताकामकेवशहुएहीं सर्वपापोंकूंकरेहैं ॥ कामरहितपुरुष किसी भीपापकूंकरतेनहीं ॥ यातैं अन्वयव्यतिरेककरिकै यहकामहीं सर्वपापकर्मोंकामूलरूपहै ॥ पुनः कैसाहैसोकाम ॥ गुरुशास्त्रकेउपदेशतैंउत्पन्नभया जो आत्माकापरोक्षज्ञानहै ॥ तथा तापरोक्षज्ञानकाफलरूपजो आत्माकाअपरोक्षज्ञानरूपविज्ञानहै ॥ जेज्ञानविज्ञानदोनों इसपुरुषकूं मोक्षकीप्रा प्तिकरणेहारेहैं ॥ तिनज्ञानविज्ञानदोनोंका यहकाम नाशकरणेहाराहै ॥ ऐसेमहान्‌अपराधवालेकामका अवश्यकरिकैनाशकरयाचाहीये इति ॥ ४१ ॥ ❀

॥ शंका ॥ हेभगवन् ताकामकेनाशकरणेवास्तै पूर्व आपनै इंद्रियोंकावशकरणा कथनकरया ॥ सो यद्यपि जिसीकिसीप्रकारतैं बाह्यश्रोत्रादिकइंद्रियोंका वशकरणातौं संभवहोइसकेहै ॥ तथापि अंतरकीतृष्णाकात्यागकरणा बहुतदुर्घटहै ॥ समाधान ॥ हेअर्जुन (रसोप्यस्यपरंदृष्ट्वानिवर्त्तते) इसवचनविषे पूर्व हम परवस्तुकेदर्शनकूंहीं तारसरूपतृष्णाकीनिवृत्तिविषेकारणरूप कथनकरिआयेहैं ॥ शंका ॥ हेभगवन् जिसपरवस्तुकेदर्शनतैं तिस तृष्णाकीनिवृत्तिहोवैहै ॥ सोपरवस्तु कौनहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए ॥ श्रीभगवान् तिसपरशब्दकाअर्थरूप शुद्धआत्माकूं देहादिकोतैंभिन्नकरिकै निरूपणकरेहै ॥

(मू० श्लो०) इंद्रियाणिपराण्याहुरिंद्रियेभ्यःपरंमनः ॥ मनसस्तुपराबुद्धिर्योबुद्धेःपरतस्तुसः ॥ ४२ ॥ इंद्रियाणि । पराणि । आहुः । इंद्रियेभ्यः । परं । मनः । मनसः । तु । परा बुद्धिः । यः । बुद्धेः । परतः । तु । सः ॥ ४२ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेअर्जुन वेदकी श्रुतियां इसस्थूलशरीरतैं श्रोत्रादिकइंद्रियोंकूं पर कहेहैं तथा तिनइंद्रियोंतैं मन परहै तथा तामनतैं बुद्धि परहै और जो बुद्धि तैंभी परेस्थितहै सोई ईहीं परआत्माहै ॥ ४२ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन स्थूल तथा जड तथा परिच्छिन्न तथा बाह्य ऐसेजेयहदेहादिकअर्थहैं ॥ तिनदेहादिकअर्थोंकीअपेक्षाकरिकै श्रोत्रादिकपंचज्ञानइंद्रिय सूक्ष्महैं तथाप्रकाशकहैं तथाव्यापकहैं तथाअंतरस्थितहैं ॥ यातैं वेदवेत्तापुरुष अथवा वेदकीश्रुतियां तिनदेहादिकअर्थोंतैं तिनश्रोत्रादिकइंद्रियोंकूं परकहे हैं अर्थात् उत्कृष्टकहेहैं ॥ इसप्रकार आगेभी जानिलेणा ॥ और संकल्पविकल्परूपमनहीं तिनश्रोत्रादिकइंद्रियोंका प्रवर्त्तकहै ॥ मनतैंविना तिनइंद्रियों

कीप्रवृत्तिहोवैनहीं याकारणतैंहीं मनकीसावधानतातैंविना समीपवस्तुकाभी नेत्रादिकइंद्रियोंकरिकै ग्रहणहोतानहीं ॥ यातैं तिनश्रोत्रादिकइंद्रियोंतैं सोसंकल्पविकल्परूपमन परहै ॥ और निश्चयरूपबुद्धिपूर्वकहीं सो मनकासंकल्परूपधर्म उत्पन्नहोवैहै ॥ तानिश्चयतैंविना सोसंकल्प होवैनहीं ॥ यातैं सासं कल्परूपमनतैं सानिश्चयरूपबुद्धि परहै ॥ और जो आत्मादेव ताबुद्धिकाप्रकाशकहोणेतैं ताबुद्धितैंभी परेस्थितहै ॥ और जिसदेहीरूपआत्माकूं इंद्रियादिक आश्रयोंकरिकैयुक्तहुआ यहकाम ज्ञानकेआवरणद्वारा मोहकीप्राप्तिकरेहै ॥ सोबुद्धिद्रष्टासाक्षीआत्माहीं तापरशब्दकाअर्थहै ॥ इहां (बुद्धेःपरतस्तुसः) यावचनविषेस्थित जो सःयहपदहै ॥ ता सः पदकरिकै यद्यपि व्यवधानतैंरहितवस्तुकाहीं परामर्शहोवैहै ॥ व्यवधानयुक्तवस्तुका परामर्शहोवैनहीं ॥ तथापि जैसेश्रुतिविषे (आत्मैवेदमग्रआसीत्) यावचनकरिकै आत्माका प्रतिपादनकरिकै तिसतैं अनंतर अनेकपदार्थोंकाप्रतिपादनकरिकै तिसतैंअनंतर (सएषइहप्रविष्टः) याप्रकारकावचन कथनकऱ्याहै ॥ यावचनविषेस्थितजो सःयहपदहै ॥ ता सःपदकरिकै पूर्व (आत्मैवेदमग्रआसीत्) यावचन विषेकथनकऱ्येहुए व्यवहितआत्माकाभी परामर्शकऱ्याहै ॥ तैसे ईहांभी चालीसवेंश्लोकविषे (देहिनं) यापदकरिकैकथनकऱ्याजोआत्माहै ॥ ताव्यवहितआत्माका ता सःपदकरिकै परामर्श संभवहोइसकेहै इति तहां श्रुति ॥ (इंद्रियेभ्यःपराह्यर्थाअर्थेभ्यश्चपरंमनः ॥ मनसस्तुपराबुद्धिर्बुद्धेरात्मामहान्परः ॥ महतःपरमव्यक्तमव्यक्तात्पु रुषः परः ॥ पुरुषान्नपरंकिंचित्साकाष्ठासापरागतिः ॥) अर्थयह ॥ श्रोत्रादिकइंद्रियोंतैं शब्दादिकअर्थ परहैं ॥ औरतिनअर्थोंतैं मनपरहै ॥ और ता मनतैं व्यष्टिबुद्धि परहै ॥ और ताव्यष्टिबुद्धितैं हिरण्यगर्भकीसमष्टिबुद्धि परहै ॥ और तासमष्टिबुद्धितैं मायारूपअव्याकृत परहै ॥ और तामायारूप अव्याकृततै सर्वजडपदार्थोंकाप्रकाशकरणैहारापूर्णआत्मा परहै ॥ शंका ॥ ऐसेपरिपूर्णआत्मातैंभी कोई परहोवैगा ॥ ऐसीशंकाकेहूए साक्षात्श्रुतिभगवती उत्तरकेहैहै ॥ (पुरुषान्नपरंकिंचितइति) तापरमात्मादेवतैंपरे कोईभीवस्तुनहींहैं ॥ जिसकारणतैं सोपरमात्मादेवहीकाष्ठारूपहै ॥ अर्थात् सर्वकाअधिष्ठानहोणेतैं समाप्तिरूपहै ॥ तथा (सोऽध्वनः परमाप्नोतितद्विष्णोः परमंपदम्) इत्यादिकश्रुतियोंकरिकैसिद्धजा परागतिहै ॥ तापरागतिरूपभी सोपरमात्मादेवहींहैइति ॥ यहसर्व अर्थ (योबुद्धेः परतस्तुसः) इसवचनकरिकैं श्रीभगवान्ने कथनकऱ्याहै ॥ इहां श्रुतिका तथाभगवत्वचनका आत्माकेपरत्वविषेही तात्पर्यहै ॥ कोईइं द्रियादिकोंकेपरत्वविषे तात्पर्यनहींहैं ॥ और श्रुतिविषे (इंद्रियेभ्यः पराह्यर्थाः) यहजोवचन स्थितहै ॥ तावचनकेस्थानविषे श्रीभगवान्नैंअर्थेभ्यः परार्णी द्रियाणि यहवचन कथनकऱ्याहै ॥ तहां जैसे शब्दादिकअर्थोंविषे इंद्रियोंतैं परत्वसंभवैहै ॥ तैसे पूर्वउक्तहेतुवोंते तिनइंद्रियोंविषेभी देहादिक अर्थोंते परत्वसंभवैहै ॥ यातैं ताश्रुतिवचनकेसाथि भगवानकेवचनका विरोधहोवैंनहीं ॥ इनदोनों श्रुतियोंकाअर्थ आत्मपुराणकेनवमें अध्यायविषे हम विस्ता रतैंकथनकरिआयेहैं इति ॥ ४२ ॥ ❀ ॥ अब पूर्ववचनोंकेकहणेकरिकै सिद्धभयाजोअर्थहै ॥ ताफलितार्थकूं श्रीभगवान् कथनकरेहै ॥

(मू० श्लो०) एवंबुद्धेःपरंबुद्ध्वासंस्तभ्यात्मानमात्मना ॥ जहिशत्रुंमहाबाहोकामरूपंदुरासदम् ॥ ४३ ॥ इतिश्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादेकर्मयोगोनामतृतीयोऽध्यायःसमाप्तः ॥ ३ ॥ एवं । बुद्धेः । परं । बुद्ध्वा । संस्तभ्य । आत्मानम् । आत्मना । जहि । शत्रुं । महाबाहो । कामरूपं । दुरासदम् ॥ ४३ ॥ (इतिपदच्छेदः) हेमहान्‌बाहुवालाअर्जुन इस प्रकार आत्मादेवकूं बुद्धितैं पर जानिकरिकै तथा मनकूं निश्चयरूपबुद्धिकरिकै स्थिरकरिकै इसतृष्णारूप तथा दुःखंकरिकैव शहोणेहारे कामरूपशत्रुकूं तूं नाशकर ॥ ४३ ॥ (इतिपदार्थः)

॥ टीका ॥ हेअर्जुन (रसोप्यस्यपरंदृष्ट्वानिवर्त्तते) इसश्लोकविषे जोआत्मादेव परशब्दकरिकैकथनकरयाहै ॥ तिसपरिपूर्णआत्मादेवकूं बुद्धितैंपर साक्षात्कार करिकै तथा यह साक्षी आत्मा बुद्धितैंभीपरहै याप्रकारकी निश्चयरूपबुद्धिकरिकै मनकू स्थिरकरिकै तूं सर्वपुरुषार्थकेनाशकरणेहारे इसकामरूपशत्रुकूं नाशकर ॥ कैसाहै यहकामरूप शत्रु इच्छातृष्णाहैस्वरूपजिसका ॥ तथा ता परआत्माकेसाक्षात्कारतैंविना बहुतदुःखकरिकैभी नाशकरणेकूंअशक्यहै ॥ ऐसेकामकेनाशहूएतैं अनंतर सर्वअनर्थोंकीनिवृत्तिहोवैहै ॥ ताकामकेनाशतैंविना जन्ममरणादिकअनर्थोंकीनिवृत्तिहोवै नहीं ॥ ईहां (दुरासदं) यहजोकामका विशेषणकथनकरयाहै ॥ सो इसकामकेनाशकरणेवास्तै इसअधिकारीपुरुषनैं अत्यंतअधिकप्रयत्नकरणा याअर्थकेबोधनकरणेवासतै कथनकरयाहै ॥ और (हेमहाबाहो) यासंबोधनकरिकै श्रीभगवान्‌ने यहअर्थ सूचनकरया ॥ महान्‌पराक्रमवाले तैंअर्जुनकूं इसकामरूपशत्रुकानाशकरणा अत्यंतसुगमहैइति ॥ इसतृतीयअध्यायकेसर्वअर्थका संक्षेपतैंकथनकरणेहारा यहश्लोकहै ॥ उपायःकर्मनिष्ठात्रप्राधान्येनोपसंहृता ॥ उपेयाज्ञाननिष्ठातुतद्गुणत्वेनकीर्त्तिता ॥ अर्थयह ॥ ज्ञाननिष्ठाकाउपायरूप जोनिष्कामकर्मनिष्ठाहै ॥ साकर्मनिष्ठा इसतृतीयअध्यायविषे प्रधानरूपकरिकैंकथनकरीहै ॥ और फलरूपज्ञाननिष्ठातो ताकागौणरूपकरिकै कथनकरीहै इति ॥ ४३ ॥ ❀ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमत्स्वामिउद्धवानंदगिरिपूज्यपादशिष्येण स्वामिचिद्घनानंदगिरिणा विरचितायां प्राकृतटीकायां श्रीभगवद्गीतागूढार्थदीपिकाख्यायां तृतीयोऽध्यायःसमाप्तः ॥ ३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

॥ ॐ श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीगुरुभ्योनमः ॥ श्रीकाशीविश्वेश्वराभ्यांनमः ॥ श्रीशंकराचार्येभ्योनमः ॥ अथ चतुर्थोऽध्यायप्रारंभः ॥ तहां पूर्वअध्यायविषे यद्यपि उपायकरिकैप्राप्तहोणेकूंयोग्य जोउपेयरूपज्ञानयोगहै तथाताज्ञानयोगकाउपायरूप जोकर्मयोगहै तिनदोनोंयोगोंकूं यथाक्रमतैं उपेयरूपकरिकै तथाउपायरूप करिकै श्रीभगवान्कथनकरताभयाहै ॥ तथापि (एकंसांख्यंचयोगंचयःपश्यतिसपश्यति) इसवक्ष्यमाणवचनकीरीतिसैं साध्यरूपज्ञानयोग तथा ताकासाधनरूपकर्मयोग यादोनोंयोगोंकेफलकीएकतातैं एकताकथनकरिकै ता साधनरूपकर्मयोगकी तथा साध्यरूपज्ञानयोगकी अनेकप्रकारकेगुणोंकेआधानअर्थ श्रीभगवान् विद्यावंशकेकथनकरिकै स्तुतिकरेहै ॥

(मू० श्लो०) ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ इमंविवस्वतेयोगंप्रोक्तवानहमव्ययम् ॥ विवस्वान्मनवेप्राहमनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥ १ ॥ इमं । विवस्वते । योगं । प्रोक्तवान् । अहम् । अव्ययं । विवस्वान् । मनवे । प्राह । मनुः । इक्ष्वाकवे । अब्रवीत् ॥ (इतिप०) ॥ हेअर्जुन मैंकृष्णभगवान् इस नाशतैंरहित ज्ञानयोगकूं प्रथम सूर्यकेताई कहताभया और सोसूर्य आपणे मनुपुत्रकेताई कहताभया और सोमनु आपके इक्ष्वाकुपुत्रकेताई कथनकरताभया ॥ १ ॥ (इतिपदा०) ॥

॥ टीका ॥ हेअर्जुन द्वितीय तृतीय यादोनोंअध्यायोंकरिकै कथनकऱ्याजो ज्ञाननिष्ठारूप ज्ञानयोगहै॥जोज्ञानयोगकर्मनिष्ठारूपकर्मयोगरूपउपायकरिकै प्राप्तहोवैहै॥ ऐसे ज्ञाननिष्ठारूपज्ञानयोगकूं मैंसर्वजगतकापालक वासुदेवसृष्टिकेआदिकालविषे सूर्यकेप्रति कथनकरताभया ॥ जोसूर्यक्षत्रियवंशका बीजरूपहै ॥ तात्पर्ययह ॥ ताज्ञानयोगकीप्राप्तिद्वारा तिनराजावोंविषे बलकाआधानकरिकै तिनराजावोंकेअधीन सर्वजगत्कापालनकरणेवास्तै मैंकृष्णभगवान् तिनराजावोंकेप्रति ताज्ञानयोगका कथनकरताभयाइति ॥ शंका ॥ हेभगवन् इसज्ञानयोगकरिकै तिनराजावोंविषे किसप्रकार बलकाआधानहोवैहै ॥ ऐसीअर्जुनकीशंकाकेहुए ॥ श्रीभगवान् ता ज्ञानयोगविषे विशेषणकरिकै ताबलकेआधानकीकारणताकूं निरूपणकरैहै (अव्ययमिति) हेअर्जुन नाशतैंरहितजोवेदभगवान्है ॥ सोवेदभगवान्हीं इसज्ञानयोगका मूलरूपहै ॥ याकारणतैं यहज्ञानयोग अव्यय यानामकरिकैकह्याजावैहै ॥ अथवाताज्ञानयोगकाफलरूपजोमोक्षहै ॥ सोमोक्ष नाशतैंरहितहै ॥ याकारणतैंभी यहज्ञानयोग अव्यय यानामकरिकैकह्याजावैहै ॥ इसप्रकार वेदरूपमूलकरिकै तथामोक्षरूपफलकरिकै नाशतैंरहित जोज्ञानयोगहै ॥ ताज्ञानयोगविषे तिनराजावोंकेबलकीआधानकता संभवैहै इति ॥ हेअर्जुन सोहमाराशिष्य सूर्य आपणे वैवस्वतमनुनामापुत्रकेताईसोज्ञानयोग कथनकरताभया ॥ और सोवैवस्वतमनु आपणे इक्ष्वाकुनामापुत्रकेताई सोज्ञानयोग कथनकरताभया ॥ जोइक्ष्वाकु सर्वराजावोंतैं आदिराजाहै ॥ यद्यपि यहश्रीभगवान्काउपदेश मन्वंतरमन्वंतरविषे